chapter-3

अध्याय ३

तुलसी साहित्य में भक्ति

दोहावली - ग्रंथ परिचय ।

युगप्रभाव / भूमिका / दोहावली / दोहावली के राम / नामजाप महिमा / करुणामय श्री राम का स्वभाव / भक्त की अभिलाषा / कल्याण का सुगम उपाय / रामप्राप्ति का सुगम उपाय / शरणागति की महिमा और भक्ति का स्वरुप / श्री राम कृपा क्या है ? / भजन की महिमा / प्रार्थना और विनम्रता।

विनयपत्रिका - ग्रंथ परिचय ।

विनयपत्रिका का अर्थ / भक्ति की कठिनता / अवतार वंदना / शैव वैष्णव समन्वय भक्ति / मानसी पूजा / स्मार्त भक्तिभाव / षोड़षोपचार पूजा / प्रपत्ति ।

कवितावली में भक्ति

ग्रंथ परिचय / दुःनिवृत्ति का अमोघ साधन भक्ति / आर्तभक्ति / नामस्मरण / चातकभाव का प्रपत्ति सिद्धांत / भक्ति में विनय की सात भूमिका ।

गीतावलीमें भक्ति

ग्रंथ परिचय :- भक्ति में निष्ठा तत्व का विस्तृत दर्शन ।

१. तुलसी साहित्य में भक्ति ।
   (रामचरित मानस के अतिरिक्त)
२. तुलसी साहित्य में दर्शन (देखिये पेज नं. ४६)

तुलसी साहित्य में भक्ति

युग का प्रभाव :-

तुलसी का युग भक्ति आंदोलन का युग था। दक्षिण से आया हुआ भक्तिप्रवाह संपूर्ण उत्तर भारत में बहकर सभी संतकवियों को प्रभावित करने लगा और इस भक्ति प्रवाह के दो प्रमुख प्रचारक रहे – रामानंद और वल्लभाचार्य जो हम प्रथम अध्याय में देख चुके हैं। इन आचार्यों के प्रभाव से सारा देश भक्तिरस से परिप्लावित हो गया। अनेक मंदिर, मठ और अखाड़े भक्ति के केन्द्रस्थान बन गये। काशी से लेकर वृंदावन तक राम और कृष्णभक्ति का जोरशोर से प्रचार हुआ। तुलसीयुग में भक्तिधारा दो शाखाओं में प्रवाहित हुई। सगुण और निर्गुण। निर्गुण शाखा को शुक्लजीने स्वयं ज्ञानाभासाश्रयी माना है – "निर्गुण-पंथ के संतो के संबंध में यह अच्छी तरह समझ रखना चाहिए कि उनमें कोई दार्शनिक व्यवस्था दिखाने का प्रयत्न व्यर्थ है। उन पर द्वैत-अद्वैत, विशिष्टाद्वैत आदि का आरोप करके वर्गीकरण करना दार्शनिक पद्धति की अनभिज्ञनता ही प्रकट करेगा।।[१] निर्गुण मार्ग का प्रमुख स्वर ज्ञान था और अंतर-साधना पर जोर दिया गया था। निर्गुणमार्ग से अनेक पंथ और संप्रदाय निकले – जैसे कि कबीरपंथ, सेनपंथ, रैदासी संप्रदाय, नानकपंथ आदि।[२]

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास – पृ. ११२

२ उत्तरी भारत की संत परंपरा – पृ. २३३, २४६, २६१, २८७, ३९१.

उन सारे संप्रदायों में कबीर का प्रभाव अनूठा ही था, परंतु कबीर का निर्गुणवाद, वेदशास्त्र की निंदा, मूर्ति पूजा का विरोध, वर्णाश्रम पर प्रहार आदि बातों का विरोध तुलसी ने डटकर हकारात्मक ढंग से किया और सगुणोपासना तथा रामभक्ति शाखा प्रवाह में अपना अद्वितीय योगदान दिया ।

कबीर ने कहा कि –

सगुण की सेवा करौ निर्गुण का करु ज्ञान ।
निर्गुण सगुण के परे, तहैं हमारा ध्यान[१] ।।

वह तो इन दोऊ ते न्यारा.... जानै जाननहारा[२]

परंतु तुलसी ने अगुन-सगुन में समन्वय स्थापित करते हुए कहा कि –

'अगुन सगुन दुई ब्रह्म सरुपा । अकथ अगाध अनादि अनूपा ।'[३]

'सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा गावहिं मुनिपुरान बुध बेदा ।'[४]

कबीर ने अवतारवाद का खंडन करते हुए कहा कि –

'दशरथ सुत तिहुं लोक बखाना । राम नाम का मरम न जाना ।[५]

'दशरथ कुल अवतरि नहिं आया, लंका के राय सतामा ।[६]

'वे रघुनाथ एक कै सुमिरै जो सुमिरै सो अंधा ।[७]

१-२ कबीर वचनावली – पृ. ९५, १६६

३-४ रामचरित मानस १/२३/१, १/११६/१

५-६-७ कबीर वचनावली – पृ. १६३, १६४

परंतु संत तुलसीने पुराण परंपरा का निर्वाह, अवतारी पुरुषों के प्रति श्रद्धा और सगुणोपासना पर ज़ोर देते हुए कबीर की बातों का मुँहतोड़ उत्तर दिया[1]

एक बात नहिं मोहिं सोहानी, जदपि मोहबस कहेहु भवानी ।
तुम्ह जो कहा राम कोउ आना, जेहि श्रृति गाव धरहिं मुनि ध्याना ॥

मुकुर मलिन अस नयन बिहीना । रामरूप देखहिं किमि दीना ॥
जिन्ह के अगुन न सगुन बिबेका । जल्पहिं कल्पित बचन अनेका ।

जेहि इमि गावहिं बदे बुध जाहि धरहिं मुनि ध्यान ।
सोई दशरथ सुत भगत हित कोसलपति भगवान ।

निर्गुण संप्रदाय के कईं संत अशिक्षित और शुद्रवर्ण के थे, विप्रवर्ण द्वारा उपेक्षित निम्नवर्ग में वे शुद्रवर्ण के संत स्वाभाविक ही आदरपात्र होने लगे और उन लोगों की ज्ञानकथनी से उत्तेजित होकर तुलसीने कहा[2]

बादहिं सुद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह तें कछु घाटि ।
जानई ब्रह्म सो विप्रवर आँखि देखावहिं डाँटि ॥

वेद पुराण से प्रतिकूल चलनेवाले सिद्ध गोरख और निर्गुणपंथियों के उपदेश को व्यर्थ बतलाते हुए तुलसीने अनुसरणीय भक्तिपथ का निर्देश किया ।

साखी सबदी दोहरा, कटि किहनी उपखान
भगति निरुपहिं भगत कलि निंदहि वेद पुरान [3]।

---

१ रामचरित मानस १/११४, ३/११५ २-३, १/११८

२ दोहावली - ५५३

३ दोहावली - ५५४

''तुलसीदास के समय में वज्रयानी सिद्धों और नाथपंथी योगियों का समाज पर जो प्रभाव था उसे वे अवांछनीय समझते थे । यह बात लक्ष्य करने योग्य है कि निर्गुणपंथ की विचारधारा का तीव्र खंडन करते हुए भी उन्होंने कबीर आदि का नामोल्लेख नहीं किया, परंतु गोरख का उल्लेख किये बिना नहीं रह सके । इससे सूचित होता है कि वे गोरखनाथ को सामाजिक रोग का प्रधान कारण समझते थे । उन्होंने अनुभव किया कि गोरखपंथीयों का प्रभाव समाज घातक है, ये पाखंडी योगी अपने वाचनिक ज्ञान और वैरागी वेश से लोगों को भरमा रहे हैं, इनके त्रास से वर्णाश्रम धर्म का लोप हो गया है, इनकी कुवासनाने कर्म और उपासना का सत्यानाश कर दिया है, गौखद्वारा उपदिष्ट हठयोग साधना के कारण लोग भक्ति के वास्तविक स्वरुप को भूल गये हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि गोरख के व्यासजी कलियुगने ही निगमागम सम्मत योग का ढोंग रचकर जगत को ठग लिया है ।[1]'' – और इस प्रकार अपनी नज़रों के सामने सामाजिक और धार्मिक पतन को सहन न कर सकने से तुलसी को लिखना पड़ा –

बरनधरम गयो आश्रमनिवास तज्योत्रासन चकित सो पहावनो परो सो है ।
करम उपासना कुबासना बिनास्यो ज्ञान बचन विराग बेष जगत हरो सो है ।
गोरख जगायो जोग भगति भगायो लोग निगम नियोग ते सो कलि ही छरो सो है ।
काय मन बचन सुभाय तुलसी है जाहि रामनाम को भरोसो ताहि को भरोसो है [2]।

---

१ तुलसी काव्य मीमांसा पृ. २३६

२ कवितावली ७/८४

निर्गुणज्ञान के नाम पर जो अनेक संप्रदाय चल पड़े थे और सगुणभक्ति तथा अवतारवाद का खंडन हो रहा था ऐसी स्थिति में तुलसी ने भक्तिमत का मंडन करते हुए कहा -

श्रृतिसंमत हरि भगति पथ संजुत बिरति बिबेक
तेहि न चलहिं नर मोहबस कल्पहि पंथ अनेक ।[१]

हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में अवतार भावना का वेगवान प्रवाह चला उसने अक्कड़ निर्गुण संतो को भी अभिभूत कर दिया ।''[२] सगुण काव्यधारा में राम और कृष्ण के नाम, रुप, गुण-लीला-धाम का और उनकी भक्ति का मुक्तकंठ से हमारे संतकवियों द्वारा गौरवगान हुआ । मध्व, निंबार्क, वल्लभ और चैतन्य के सिद्धांतो के अनुसार कृष्णभक्ति के अनेक संप्रदाय हुए । एक और कबीर की 'टेढी सीधी निर्गुण वाणी' का प्रभाव रहा, तो दूसरी और सूफियों की प्रेम मूलक साधना पद्धति ने भी लोगों को आकृष्ट किया । परंतु यह रहस्यवादी पद्धति और अदृश्य ईश्वर की बातों में लोगों को ठोस आधार नहीं मिला, परिणामतः श्यामसुंदर श्रीकृष्ण चरित्र ही सर्वोपरी रहा । जो आनंदघन सांवरेने रसखान जैसे मुसलमान कवियों को भी प्रभावित किया ।

''कृष्ण कवियों ने श्रीकृष्ण जी मधुर लीलाओं का निरुपण करके लोकजीवन में उल्लास और सरसता का वातावरण निर्मित किया, किंतु उनकी लोकदृष्टि समाज कल्याण और धर्म सौंदर्य के प्रांत तक नहीं पहुंच सकी।''[३]

---

१ रामचरित मानस ७/१००

२ तुलसी काव्य मीमांसा - पृ. २३८

३ तुलसी काव्य मीमांसा - पृ. २३९

भूमिका

रामानंद द्वारा प्रवर्तित रामभक्ति धारा के दो रूप थे । निर्गुण राम भक्ति और सगुण रामभक्ति । रामानंद के शिष्य कबीर आदि ने निर्गुणभक्ति का प्रचार किया । कहा जा चुका है कि उन निर्गुण संतो ने वर्णधर्म, वेदशास्त्र, अवतारवाद आदि का खंडन किया ।'' लोकमर्यादा का उल्लंघन, समाज की व्यवस्था का तिरस्कार, अनधिकार चर्चा, भक्ति और साधुता का मिथ्यादंभ, मूर्खता छिपाने के लिये वेदशास्त्र की निंदा - ये सब बातें ऐसी थी जिनसे गोस्वामीजी के अंतरात्मा बहुत व्यतीत हुई ।''[१]

लोक कल्याण के लिये निर्गुणराम कठिन है ऐसा तुलसी को लगा । अतः एवं उन्होंने भीडभंजक, असुरनिकंदक, लोकरक्षक, सगुण राम की भक्ति की स्थापना की । सगुण राम भक्ति में भी दो प्रवाह हुए, माधुर्य विशिष्ट और मर्यादा विशिष्ट । इनमें कान्तकन्ताभाव की माधुर्य विशिष्ट रसिकभक्ति श्रृंगार से भरी थी । वह तुलसी के मनोवृत्ति के प्रतिकूल थी । ''वह समाज का उन्नयन नहीं कर सकती थी इस लिये उन्होंने सेव्यसेवक भाव की मर्यादावादी भक्ति का प्रतिपादन किया।''[२]

इस प्रकार तुलसी साहित्य पर और विशेषतः भक्ति परक साहित्य पर उस युग की सामाजिक, धार्मिक और साहित्यिक परिस्थिति का गहरा प्रभाव रहा ।

---

१ रामचंद्र शुक्ल - गोस्वामी तुलसीदास - पृ. ३३

२ तुलसी काव्य मीमांसा - २३९

तुलसी की रचनाओं में भक्ति

तुलसी के अध्येताओं ने उनकी रचना के विषय में गहरी छानबीन के बाद निम्नलिखित रचनाओं को प्रामाणिक मानकर स्वीकार किया है ।

रचनाओं के नाम और	कालक्रम
कवितावली	सं. १६१५ से १६८०
दोहावली	सं. १६२० से १६७१
वैराग्य सन्दीपिनी	सं. १६२०
गीतावली	सं. १६२५
रामाज्ञा प्रश्न	सं. १६२० से १६२५
रामचरित मानस	सं. १६३१
पार्वती मंगल	सं. १६४३
रामललानहछु	सं. १६४३
जानकी मंगल	सं. १६४३
श्री कृष्ण - गीतावली	सं. १६४४-१६५०
बरवै रामायण	सं. १६६० के लगभग
विनय पत्रिका	सं. १६६९[१]

उपरोक्त सभी रचनाओं में से सिर्फ दोहावली, कवितावली, गीतावली, विनयपत्रिका और राम चरित मानसमें भक्ति भावना और तत्वदर्शन के विशेष तत्व मिलते हैं इसके अतिरिक्त अन्य ग्रंथ अन्यविषयों के पोषक है । यहां हम तुलसी साहित्य में भक्तिपरक विचारों को लेकर एक एक रचनाओं के आधार पर भक्ति विषयक तुलसी के मनोभावों को प्रकट करने का प्रयत्न करेंगे और श्री राम चरित मानस में भक्ति और दर्शन के अनुशीलन को स्वतंत्र अध्याय के रूप में प्रकट करेंगे।

---

१ तुलसीदास और उनका काव्य - पृ. २१९

ग्रंथ परिचय

दोहावली के राम

भक्त चूडामणि और संत शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास की प्रमुख कृतियों में दोहावली का अनूठा स्थान है । भक्त समाज में इसका बहुत आदर है । गोस्वामीजी ने अपनी अनुभूतियों को बड़े ही भावपूर्ण दोहों में व्यक्त किया है । भक्ति ज्ञान, वैराग्य, सदाचार, प्रेम, नीति, आदि विविध विषयों पर इतने सरस दोहे गोस्वामीजी की कृतियों के अतिरिक्त शायद ही कहीं मिले । भक्त की प्रासादिक वाणी का ऐसा आनंद और कहाँ मिल सकता है ?[1]

दोहावली ५७३ दोहों का संग्रह है । इन दोहों में ७५ दोहे 'मानस' के, ३५ दोहे 'रामाज्ञा प्रश्न' के, १३२ दोहे 'तुलसी सतसई' के और ७ दोहे 'वैराग्य संदीपिनी' के मिले हुए हैं । यह स्वतंत्र ग्रंथ नहीं कहा जा सकता ।[2] दोहों के संकलन को दोहावली नाम दिया गया । हम यहां दोहावली के भक्ति परक दोहों के आधार पर तुलसी की भक्तिभावना की चर्चा करेंगे ।

दोहावली के आरंभ के दोहे में ही सगुणराम को ध्यान धरते हुए तुलसी अपने भक्त हृदय का परिचय भी देते हैं और सकाम भक्तों की सकलमनोकामना पूर्ण होने का तथा कल्याण का आश्वासन भी ।[3] पंचवटी पर जानकी और

---

१ दोहावली - हनुमान प्रसाद पोदार - निवेदन में से ।

२ तुलसीदास और उनका काव्य - रामनरेश त्रिपाठी पृ. १८९

३ राम बाम दिसि जानकी लखन दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय सुरतरु तुलसी तोर ॥ दोहावली - १

लक्ष्मण सहित विहार करनेवाले राम सकल सुमंङ्गलों को देनेवाले हैं ।[1]

चित्रकूट पर सीता और लक्ष्मण सहित बसनेवाले श्रीराम का नामजप करने से भक्त को इच्छित फल की प्राप्ति होती है ।[2] और दूध और फलाहार करके षट्मास तक रामनाम का जाप करने से सिर्फ छः महिने में सकल सुमंगल होता है और सब सिद्धि की प्राप्ति होती है[3] एसा कहकर मंत्रजाप नाम का पांचवे प्रकार की भक्ति जो मानस में बताई है – उसका प्रतिपादन होता है ।[4]

जिनको सगुणरुप के ध्यान में रुचि अथवा प्रीति नहीं है और निर्गुण स्वरुप समझ में नहीं आता है, ऐसी दशावाले लोगों के लिये तुलसी रामनाम-स्मरण की संजीवनी बूटी का सदा सेवन करने को कहते हैं ।[5]

---

१ पंचवटी बट बिटप तर सीता लखन समेत ।
सोहत तुलसीदास प्रभु सकल सुमंगल देत – ३

२ चित्रकूट सबदिन बसत प्रभु सिय लखन समेत ।
रामनाम जप जापकहि तुलसी अभिमत देत ४ ॥

३ पय अहार फल खाई जपु राम नाम षट् मास ।
सकल सुमंगल सिध्धि सब करतल तुलसी दास ॥५॥

४ मंत्रजाप मम दृढ़ विश्वासा – पंचम भजन सुबेद प्रकाशा ।
मानस – अरण्यकांड नवधाभक्ति

५ सगुन ध्यान रुचि सरस नहिं निर्गुण मन ते दूरि ।
तुलसी सुमिरहु राम को नाम सजिवन मूरि ॥ ८ ॥

नामजप महिमा

नामजप महिमा गाते हुए तुलसी कहते हैं सब साधन शून्य है और श्री रामनाम अङ्क है। शून्य के आगे यदि अङ्क लग जाय तो शून्य का मूल्य बढ़ जाता है और अङ्क न रहने पर सब साधन शून्य है।[1] कलियुग में रामनाम कल्याणमय कल्पतरु है जिसका अवलंबन करके मदमय तुलसी तुलसीरुप अर्थात् निर्दोष, गुणमय और प्रभु को प्रिय बन सका।[2] राम नामजप में आलस्य करनेवाले लोग नष्ट हो जाते हैं और जापका पुण्यात्मा बन जाते हैं।[3] दीनबंधु भगवान जापजपनेवाले को मोक्षपद देते हैं परंतु अधम मन अपनी आदतें नहीं छोड़ता है।[4] जो फल काशी और प्रयाग में विधिवत् और हठयोग से देहत्याग करने से मिलता है वही फल रामनाम जप में अनुरागी को प्राप्त होता है।[5]

---

१ राम नाम को अंक है सब साधन है सून।
अंक गएँ कछु हाथ नहिं अंक रहें दस गून ॥१०॥

२ नामु राम को कलपतरु कलि कल्यान निवासु।
जो सुमिरत भयो भाँग ते तुलसी तुलसीदासु ॥११॥

३ रामनाम जपि जीहँ जन भएं सुकृत सुखसालि।
तुलसी इहां जो आलसी गयो आजु की काली ॥१२॥

४ राम गरीबनिवाज को राज देत जन जानिं
तुलसी मन परिहरत नहिं घुर बिनिआ की बानि ॥१३॥

५ कासीं बिधि तनु तजें हठि तनु तजें प्रयाग।
तुलसी जो फल सो सुलभ राम नाम अनुराग ॥१४॥

– दोहावली

जो मनुष्य स्वार्थ और परमार्थ दोनों के लिये अयोग्य है – ऐसा मनुष्य भी रामनाम स्मरण से क्लेशमुक्त होकर स्वार्थ–परमार्थ दोनों की प्राप्ति कर सकता है ।[१] तुलसी हंमेशा बड़े आग्रह के साथ कहते हैं कि 'हे चित्त! तू मेरी बात सुनकर उसे हितकारी समझ । राम का स्मरण ही बड़ा भारी लाभ है और उसे भूलाने में ही सबसे बडी हानि है ।[२]' तुलसी कहते हैं कि 'कुसंग और दुर्विचारों को त्याग कर रामका बन जा और उनके नाम का जप कर इससे तेरी जन्मजन्मांतर से बिगड़ी हुई स्थिति सुधर सकती है ।[३]' रामनाम को दो अक्षर रुपी दो बालक, रस–रसना को दंपति और मुख को सुंदर घर तथा दांत को कुटुंबी कहकर परमार्थ–साधक की गृहस्थी का दर्शन कराते हैं ।[४] अथवा श्री राम की भक्ति वर्षाऋतु, सेवक धान और राम नाम दो अक्षर सावन भादो मास बताया है ।[५]

---

१ स्वारथ सुख सपनेहुँ अगम परमारथ व प्रवेस ।
रामनाम सुमिरत मिटहिं तुलसी कठिन कलेस ॥१७॥

२ तुलसी हठि हठि कहत नित चित सुनिहित करि मान ।
लाभ राम सुमिरन बड़ो बड़ी बिसारें हानि ॥ २१ ॥

३ बगरी जनम अनेक की सुधरै अबहीं आजु
होहिं राम को नाम जपु तुलसी तजी कुसमाजु ॥२२॥

४ दंपति रस रसना दसन परिजन बदन सुगेह
तुलसी हर हित बरन सिसु संपति सहज सनेह ॥२४॥

५ बरषा रितु रघुपति भगति तुलसी सालि सुदास ।
रामनाम बर बरन जुग सावन भादव मास ॥२५॥

– दोहावली

रामनाम नृसिंह भगवान के समान है और भक्त जन अर्थात् नामजप करनेवाला प्रह्लाद के समान तथा कलियुग हिरण्यकशिपु के समान है । अर्थात् रामनाम भक्ति में बाधक और दुःख देनेवाला हिरण्यकशिपु को मारकर भक्त की रक्षा करनेवाला है ।[१] कलियुग में रामनाम कल्पतरु और रामभक्ति सुर धेनु के समान है और सकल सुमंगलको करनेवाली गुरुकी परमरज है । जैसे सारी पृथ्वी बीजमय और सारा आकाश सर्वनक्षत्रमय है वैसे ही रामनाम सर्वधर्ममय है । जो निष्काम भाव से राम की भक्ति में लीन हो जाता है वह रामनाम के सुदंर प्रेमरुपी अमृतसरोवर में अपने मन को मछली बना रखना है ।[३] तुलसी रामनाम को निर्गुण ब्रह्म और सगुण रुप से भी बड़ा मानते हैं ।[४] शबरी, गीध आदि अनके अधम पात्र सगुण-निर्गुण की उपासना से नहीं परंतु केवल रामनाम जप से ही मुक्त हुए।[५]

---

१ राम नाम नर केसरी कनक कसिपु कलिकाल ।
जापक जन प्रहलाद जिमि पालिंहि दलि सुरसाल ॥२६॥

२ रामनाम कलि कामतरु राम भगति सुरधेनु ।
सकल सुमंगल मूल जग, गुरुपद पंकज रेनु ॥२७॥

३ जथा भूमि सब बीजमय, नखत निवास अकास
रामनाम सब धरममय जानत तुलसीदास ॥२९॥

४ ब्रह्मराम तें नाम बड़ बर दायक बर दानि ।
राम चरित सत कोटि महँ लिय महेस जियँ जानि ॥३१॥

५ सबरी गीध सुसेवकनी सुगति दीन्ही रघुनाथ ।
नाम उधारे अमित खल बंद बिदित गुन गाथ ॥३२॥

– दोहावली

जो रामनाम परायण है और रामनाम में जिसका प्रेम, विश्वास और भरोसा है वह केवल नाम स्मरण से ही सद्गुणों और मंगलों का निधि बन जाता है ।[1] रामभक्ति से विभीषण, सुग्रीव, हनुमान जटायु आदि ने तो कुछ न कुछ पाया है, परंतु तुलसी तो केवल रामनाम में रति ही चाहते हैं ।[2] रामनाम कल्याणकारी और अमंगल को हरनेवाला है । शिवजी नित्य रामनामकी महिमा गाते हैं और वेद-पुरान भी ।[3] प्रेम और विश्वास से नामजप करने से विधाता अनुकूल हो जाता है और अभागा मनुष्य परम भाग्यवान बन जाता है ।[4] जगत के चर अचर की जल थल, और नभ में गति है लेकिन तुलसी के लिये तो रामनाम एक ही गति आसरा है ।[5] तुलसी का बल, भरोसा और विश्वास केवल रामनाम ही है ।[6]

---

१ रामनाम पर नाम तें प्रीति प्रतीति भरोस ।
सो तुलसी सुमिरत सकल अगुन सुमंगल कोस ॥३३॥

२ लंकबिभिषन राज कपि पति मारुति खग मीच ।
लहींराम सों नाम रति चाहत तुलसी नीच ॥३४॥

३ हरन अमंगल अघ अखिल करन सकल कल्याण ।
रामनाम नित कहत हर गावत बेद पुरान ॥३५॥

४ तुलसी प्रीति प्रतीति सो राम नाम जप जाग ।
किएँ होई बिधि दाहिनो देई अभागेहि भाग ॥३६॥

५ जल थल नभ गति अमित अति आग जग जीव अनेक
तुलसी तो से दीन कहँ राम नाम गति एक ॥३७॥

६ राम भरोसो राम बल राम नाम बिस्वास
सुमिरत सुभ मंगल कुसल माँगत तुलसीदास ॥३८॥

तुलसी की दृष्टि से जिसको रामनाम में प्रेम वही गति और वही विश्वास है - उसके लिये रामस्मरण दोनों और अर्थात् (लोक-परलोक) में शुभ मंगल और कुशल है ।[१]

हरिनाम नहीं जपनेवाले की रसना सर्पिणी के समान है और रामनाम में जिसका प्रेम नहीं, मानों उसका भाग्य फुट गया है ।[२] रामप्रेम में न पिघलने वाला हृदय कट जायँ, प्रेमाश्रु नहीं बहानेवाले नेत्र फूट जायँ और पुलकित नहीं होनेवाला शरीर जल जाय, क्योंकि ऐसे निकम्मे, अंङ्ग किस कामके ?[३] श्रीराम के स्मरण में, धर्मयुद्ध में शत्रु से भीड़ने के समय, दान देते समय और गुरु को वंदन करते समय जिसका शरीर पुलकित नहीं होता, वे जगत् में व्यर्थ ही जीते हैं ।[४]

---

१ राम नाम रति नाम गति राम नाम बिस्वास ।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल दुहुँ दिसि तुलसीदास ॥३९॥

२ रसना साँपिनि बदन बिल जेन जपहिं हरिनाम ।
तुलसी प्रेम न राम सों ताहि बिधाता बाम ॥४०॥

३ हिय काटहुँ कूटहूं नयन जरउ सो तन केहि काम ।
द्रवहिं स्त्रवहिं पुलकइ नहीं तुलसी सुमिरत राम ॥४१॥

४ रामहि सुमिरत रन भिरत देत परत गुरु पायँ
तुलसी जिन्हहि न पुलक तनु ते जग जीवत जायँ ॥४२॥

– दोहावली

करुणामय श्री राम का स्वभाव

सामान्य रुप से स्वामी सेवक का अपराध सुनकर क्रोधित हो जाते हैं परंतु प्रभु श्री राम स्वयं अपनी आंखों से सेवक के अपराधों को देख लेने पर भी स्वप्न में भी उन पर कुपित नहीं होते हैं ।[१]

प्रभु श्री राम को अपनी रुचि की अपेक्षा सेवक की रुचि अधिक मधुर लगती है – ऐसे स्वामी से क्यों कर विमुख हुआ जाय ?[२] जो व्यक्ति प्रभु को लोकलीला और परमतत्व ये दोनों दृष्टि से समझता है वह केवट रुचिरक्षक प्रभु राम से कभी भी विमुख नहीं होता है ।[३] वानरों के स्वामी श्री राम वृक्ष के नीचे वीराजते थे और वानर वृक्ष की डाली के उपर – तो भी प्रभु ने उनको अपने ही समान बना लिया ।[४] तुलसीदासजी रातदिन यही सत्‌शिक्षा देते हैं कि हे मन तु सांसारिक पदार्थों से प्रीति तोड़कर श्री राम से प्रेम करा।[५]

---

१ साहिब होत सरोष सेवक को अपराध सुनि ।
अपने देखे दोष अपनेहू राम न उर धरे ॥४७॥

२ तुलसी रामहि आपु तें सेवक की रुचि मीठि ।
सीतापति से साहिबहि कैसे दीजै पीठि ॥४८॥

३ तुलसी जाके होयगी अंतर बाहिर दीठि ।
सो कि कृपालुहि देइगो केवटपालहि पीठि ॥४९॥

४ प्रभु तस तर कपि डार पर ते किए आपु समान ।
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सील निधान ॥५०॥

५ रे मन सबसों निरस ह्वैं, सरस राम सों होहिं ।
भलो सिखावन देत है निसि दिन तुलसी तोहि ॥५१॥

हरे वृक्ष पर पशु पक्षी चरने आते हैं, सूखने पर लोग उसे जलाकर तापते हैं और फलने पर स्वार्थवश (फल पाने को) हाथ पसारते हैं अर्थात् यह जगत् स्वार्थमय है । परमार्थ के मित्र तो एकमात्र रघुपति राम ही है जो सर्वथा प्रेममय है ।[१] तुलसी जी कहते हैं कि श्री सीताराम से ही तेरे स्वार्थ और परमार्थ दोनों सिद्ध हो जायेंगे फिर और क्या बाकी रहता है ?[२] प्रभुकृपा से ही जो स्वार्थ-परमार्थ दोनों सिद्ध होते हैं तो फिर दूसरे दरवाजे पर दीनता दिखलाने से क्या फायदा ?[३] लक्ष्मण और रणधीर हनुमान जैसे जिनके सेवक है वह राम ही तुलसी के लिये स्वार्थ-परमार्थ स्वरूप है ।[४] जल के सिवा स्वयंसहित साराजगत् मछली का बैरी है, वैसे ही भगवान के बिना भक्त की गति जाननी चाहिए ।[५]

---

१ हरे चरहिं तापहिं बरे फरें पसारहिं हाथ ।
तुलसी स्वारथ मीत सब परमारथ रघुनाथ ॥५२॥

२ स्वारथ सीता राम सों परमारथ सिय राम ।
तुलसी तेरो दूसरे द्वार कहा कहू काम ॥५३॥

३ स्वारथ परमारथ सकल सुलभ एक ही ओर
द्वार दूसरे दीनता उचित न तुलसी तोर ॥५४॥

४ तुलसी स्वारथ राम हित परमारथ रघुबीर
सेवक जाके लखन से पवनपूत रनधीर ॥५५॥

५ ज्यों जग बैरी मीन को आपु सहित बिनु बारि ।
त्यों तुलसी रघुबीर बिनु गति आपनी बिचारी ॥५६॥

– दोहावली

भक्त की अभिलाषा

हे प्रभु में रामप्रेम के बिना सूख जाउँ और रामप्रेम से पुष्ट हो जाऊँ – ऐसा कब करेंगे ? जैसे कि मछली और जल का संबंध होता है ![1] अर्थात् प्रभु श्री राम के प्रति तेरी भक्ति जल ज्ञान जैसी पुष्ट और द्दढ़ कब बनेगी?

रामप्रेम की महत्ता

तुलसीजी कहते हैं कि राम के प्रति प्रेम, यही गति और वही चरणों में जिसकी प्रीती है उसको विधाता ने जगत् में जन्म लेने का यथार्थ फल दिया है ।[2] अपनी और अपने संबंधी समस्त पदार्थों की अपेक्षा जिसे सीतारामजी अधिक प्रिय हैं – तुलसीदासजी का चमड़ा ऐसे प्रेमी भक्त के चरणों की जूतियों लगे तो उसका सौभाग्य है ।[3] भोग और मोक्ष की इच्छा से रहित जिसका श्रीराम के चरणों में निष्काम प्रेम है वह धर्म अर्थ काम और मोक्ष चारों फलों का भी महान फल है ।[4]

---

१ राम प्रेम बिनु दूबरो राम प्रेमहीं पीन ।
रघुबर कबहूँ क करहूगे तुलसिहि ज्यों जलमीन ॥५७॥

२ राम सनेही राम गति राम चरन रति जाहि ।
तुलसी फल जग जनम को दियो विधाता ताहि ॥५८॥

३ आपु आपन तें अधिक जेहि प्रिय सीताराम ।
तेहि के पग की पानहीं तुलसी तनुको चाम ॥५९॥

४ स्वारथ परमारथ रहित सीता राम सनेहँ
तुलसी सो फल चारि को फल हमार मत एहँ ॥६०॥

तुलसी की दृष्टि से जो मनुष्य विषयरस से विरक्त है और रामप्रेम के रसिक है, वे ही श्री रामको प्रिय है – फिर ऐसा मनुष्य वन में रहे या घर में, कोई फर्क नहीं पड़ता ।[1]

जिसका मन खूंद सा बन गयाहै अर्थात् हर हाल में संतुष्ट और रामप्रेम में स्थिर है ऐसा मनुष्य विरक्त हो या गृहस्थ कोई फर्क नहीं पड़ता ।[2] जिस पर राम की सद्दृष्टि होती है उसके सब उद्यम और कर्म (क्रियमाण और प्रारब्ध) दोनों सफल हो जाते हैं और वह देह की ममता छोड़कर प्रभु के सम्मुख हो जाता है ।[3]

कल्याण का सुगम उपाय

तुलसीजी कहते हैं कि जो अपने दोषों को और श्री राम के गुणों को समझ लेता है वह कलिकाल में कल्याण पा लेता है ।[4] या तो तुझे राम प्रिय लगने लगे या प्रभु श्री राम का तू प्रिय बन जा, तुझे जो सुभग जान पडे वहीं तुझे करना चाहिए ।[5]

---

१ जो जन सखे बिषय रस चिकने राम सनेहँ ।
तुलसी ते प्रिय राम को कानन बसहिं कि गेहँ ॥६१॥

२ जथा लाभ संतोष सुख रघुबर चरन सनेह ।
तुलसी जो मन खूंद सम कानन बसहूँ कि गेह ॥६२॥

३ तुलसी उधम करम जुग जब जेहि राम सुडीठि ।
होई सुफल सोई ताहि सब सनमुख प्रभु तन पीठि ॥७५॥

४ निज दूषन गुन राम के समुझें तुलसीदास ।
होइ भलो कलिकालहूँ उभय लोक अनयास ॥७७॥

५ कै तोहि लागहिं राम प्रिय कै तू प्रभु प्रिय होरो ।
दूई मैं रुचै जो सुगम सो कीबै तुलसी तोहि ॥७८॥

– दोहावली

हे जीव ! तू दोनो में से एक ही खेल खेल ।- या तो केवल राम से ही ममता कर या ममता का सर्वथा त्याग कर दे ।[1]

श्री राम जी की प्राप्ति का सुगम उपाय

गोस्वामी जी कहते हैं कि सामने आते हुए पथिक को आप दायें-बायें जिस ओर देकर चलेंगे उसी प्रकार वह भी आपके दायें-बायें हो जायेगा । ऐसे ही श्री राम को भी जो जिस प्रकार भजता है श्रीराम भी उसे उसी प्रकार भेजते हैं ।[2]

श्रीमद् भागवत गीता में भी श्री कृष्ण ने यही बात बताई है ।[3]

विषय प्रेम से विमुख होनेवाले को श्रीराम प्रेम की प्राप्ति होती है जैसे सांप को केंचुल छोड़ देने पर ही दिखलायी देने लगता है ।[4] जब तक विषय सुख मीठा लगता है तब तक रामभक्ति हजार अमी के समान मीठी होने पर भी फीकी लगती है ।[5]

---

१ तुलसी दुइ महँ एक ही खेल छाँडि छल खेलु ।
कै करु ममता राम सों कै ममता परलेहु ॥७९॥

२ सनमुख आवत पथिक ज्यों दिएँ दाहिनो नाम ।
तैसोइ होत सु आप को त्यों ही तुलसी राम ॥८१॥

३ ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् (गीता-४/११)

४ रामप्रेम पथ देखिऐ दिएँ विषय तन पीठि ।
तुलसी केंचुरि परिहरिं होत साँपहू दीठि ॥८२॥

५ तुलसी जौ लौ विषय की सुधा माधुरी मीठि ।
तौ लौं सुधा सहस्त्र सम राम भगति सुठि सीठि ॥८३॥

शरणागति की महिमा और भक्ति का स्वरुप

गोस्वामीजी कहते हैं कि भला बुरा जैसा भी है – यह तुलसीदास श्री रामका ही है । और यदि में आपका ही हूं तो तीनों लोक और तीनों काल में मेरा कल्याण ही है ।[१] लोग मुझे अवगुणों का भंडार कहतेहैं, परंतु मुझमें एक गुण यह है कि मुझको आपका पूरा भरोसा है, इससे ही है रामजी ! आपको मुझपर रीझ जाना योग्य है ।[२]

श्री राम जी से प्रेम करना और राग अर्थात् आसक्ति एवं क्रोध को जीतकर नीति के मार्ग पर चलना, संतो के मत से भक्ति की यही रीति है । जो मनुष्य सत्यवचनी है, मन से निर्मल है, क्रिया–कपटरहित है ऐसे श्रीरामजी के भक्त को कलियुग कभी भी धोखा नहीं दे सकता ।[४]

---

१ जैसो तैसो रावरो केवल कोसलपाल ।
तौं तुलसी को है भलो तिहूँ लोक तिहूँ काल ॥८४॥

२ है तुलसी के एक गुन अवगुन निधि कहैं लोग ।
भलो भरोसो रावरो राम रीझिबे जोग ॥८५॥

३ प्रीति रामसों नीति पथ चलिय राग रिस जीति ।
तुलसी संतन के मते इहै भगति की रीति ॥८६॥

४ सत्य बचन मानस बिमल कपट रहित करतूति ।
तुलसी रघुबर सेवकहि सकै न कलिजुग धूति ॥८४॥

– दोहावली

श्री राम की कृपा

श्री राम का कल्याणमय स्वभाव सभी का कल्याण करनेवाला है ।[1] जिसको रामने आदर दे दिया वह बुरा भी भला, सदा भला ही है । दीपक ने जब काजल को अपने ऊपर धारण कर लिया तो फिर कर ही लिया ।[2] भोर के शरीर का रंग-बिरंगा विचित्र है, कायरसी बोली है, साँप भोजन है और मन कठोर है परंतु श्रीकृष्णने उसके पीच्छ को अपने सिरपर धारण किया तो फिर सभी लोग उससे प्रेम करते हुए 'मोर मोर' (मेरा-मेरा) कहने लगे ।[3] जिसको फूटी कौड़ी भी नहीं मिलती थी उसी तुलसी को गरीब निवाज श्रीराम ने आज महँगा कर दिया है अर्थात् गौरव प्रधान किया है ।[4] घर घर टुकडे मांगनेवाले के पैर आज राजा महाराजा पूजते हैं ।[5] राम से भी रामभक्त अधिक है । राजराजेश्वर राम ऋषि हो गये और हनुमान ऋण चढ़ानेवाले ।[6] भक्तों के लिये स्वयं भगवानने राजा का स्वरुप धारण करके मनुष्यों की भांति परम पवित्र लीलाएँ की ।[7]

---

१ राम निकाई रावरी है सबहीको नीक ।
जौं यह साँची है सदा तौ नीको तुलसीक ॥१०५॥

२ तुलसी राम जो आदरयो खोटो खरो खरोई ।
दीपक कंजर सिर धरयो धरयो सुधरयो धरोई ॥१०६॥

३ तनु बिचित्र कायर बचन अहि अहार मन घोर ।
तुलसी हरि भए पच्छघर ताते कह सब मोर ॥१०७॥

४ लहइ न कूटि कौडिहू को चाहै केहि काज ।
सो तुलसी महंगो कियो राम गरीब निवाज ॥१०८॥

५ घर घर माँगे टूक पुनि भूपति पूजे पाय ।
जे तुलसी तब राम बिनु ते अब राम सहाय ॥१०९॥

६ तुलसी रामहु तें अधिक राम भगत जियँ जान ।
रिनिया राजा राम भे धनिक भए हनुमान ॥१११॥

७ भगत हेतु भगवान प्रभु राम धरेउ तनु भूप ।
किए चरित पावन परम प्राकृत नर अनुरुप ॥११३॥

भजन की महिमा

जल के मथने से भले ही घी उत्पन्न हो जाय तथा बालु के पीसने से चाहे तेल, परंतु श्री हरि के भजन बिना भवसागर के पार नहीं हुआ जा सकता।[1] हरिमाया के द्वारा रचे हुए गुण-दोष हरिभजन बिना नष्ट नहीं होते ।[2] जो जड़ को चेतन और चेतन को जड़ कर देते हैं वैसे समर्थ प्रभु श्री राम को जो भजते हैं वे धन्य है ।[3] श्री राम के प्रताप से समुद्र में पथ्थर भी तर गये ऐसे समर्थ प्रभु को छोड़कर अन्याश्रय नहीं रहना चाहिए ।[4] काल जिनका धनुष्य है और लव, निमेष, परमाणु, युग, वर्ष और कल्प जिनके प्रचण्ड बाण है ऐसे प्रभु को तू क्यों नहीं भजता ?[5] शोक का घर काम को छोड़कर जब तक जीव राम को नहीं भजता है तब तक स्वप्न में भी सुख प्राप्त नहीं होता ।[6] विश्वास के बिना भक्ति नहीं होती और भक्ति के बिना राम की कृपा नहीं होती तथा रामकृपा बिनु जीवन में शांति नहीं मिलती ।[7]

---

१ बारी मथे धृत होइ बरु सिकता ते बरु तेल ।
बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिध्धांत अपेल ॥१२६॥

२ हरि माया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहिं ।
भजिय राम सब काम तजि अस बिचारि मन माहिं ॥१२७॥

३ जो चेतन कहँ जड़ करइ जडहि करइ चैतन्य ।
अस समर्थ रघुनाथकहि भजहिं जीव ते धन्य ॥१२८॥

४ श्री रघुबीर प्रताप ते सिंधु तरे पाषान ।
ते मतिमंद जे राम तजि भजहिं जाई प्रभु आन ॥१२९॥

५ लव निमेष परमानु जुग बरस कलप सर चंड ।
भजसि न मन तेहि राम कहँ कालु जासु कोदंड ॥१३०॥

६ तब लगिं कुसल न जीब कहुँ सपनेहुँ मन विश्राम ।
जब लगि भजत न राम कहुँ सोक धाम तजि काम ॥१३१॥

७ बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न रामु ।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह विश्राम ॥१३२॥ – दोहावली

भक्त की प्रार्थना और विनम्रता ।

हे प्रभु ! काल, कर्म, गुण, दोष, जगत् जीव - सब आपके अधीन है। हे जानकीनाथ ! इस तुलसी को भी अपना ही जानकर अपनाइये ।[१] हे रघुबीर! मेरे समान कोई दीन नहीं है और आपके समान कोई दीनबन्धु नहीं है - ऐसा विचार करके हे रघुवंशमणि ! जन्म-मरण के महान भय का नाश कीजिये ।[२] सब लोग मुझे श्रीराम जी का दास कहते हैं और मैं भी बिना लज्जा-संकोच के कहलाता हूँ। कृपालु श्रीराम जी इस उपहास को सहते हैं कि श्री जानकीनाथजी सरीखे स्वामी का तुलसीदास सा सेवक है ।[३] यहां दास्यभक्ति भी प्रकट होती है - निति का अवलंबन और रामचरण में प्रेम ही श्रेष्ठ ।

नीतिपर चलना और रामचरण में अटूट प्रेम को ही तुलसी ने उत्तम माना है ।[४] दोहावली में प्रेमको महिमा का दर्शन कराने के लिये अन्य कई स्थानों पर चातक, मछली, साँप मृग आदि के उदाहरण भी दिये गये हैं ।

---

१ काल करम गुन दोष जग जीव तिहारे हाथ ।
तुलसी रघुबीर रावरो जानु जानकी नाथ ॥१७७॥

२ मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर ।
अस बिचारी रघुबंस मनि हरहु विषम भवभीर ॥१७९॥

३ हौहुं कहावत सब कहत राम सहत उपहास ।
साहिब सीतानाथ सो सेवक तुलसीदास ॥१८१॥

४ चलत नीति मग राम पग नेह निबाहब नीक ।
तुलसी पहिरिअ सो बसन जो न पखारें फीक ॥४६१॥

विनयपत्रिका में भक्ति ।

'गीतावली' की भांति 'विनयपत्रिका' भी एक संग्रह ग्रंथ है । कवि ने स्वतः इस संग्रह का निर्माण काल नहीं दिया है ।[1] एक पद इस प्रकार का अवश्य कई बार प्रस्तुत लेखक के सुनने में आया है, जिसका आवश्यक अंश निम्नलिखित है ।[2]

'रामचरित मानस' के बाद 'विनयपत्रिका' ही तुलसीदास की सबसे बड़ी महत्वपूर्ण रचना है । इसमें कुल २७९ पद है[3] और सभी पद संगीतमय है।

'विनयपत्रिका' में तुलसीदासजी ने प्रत्येक पद में मानवजीवन को कल्याण की और आकर्षित करने का प्रयास किया है । लोकहित की ऐसी प्रबल प्रेरणा हिंदी के अन्य किसी कवि के अन्तःकरण में अबतक कभी जागृत नहीं हुई।[4]

---

१ 'तुलसीदास'– माताप्रसाद गुप्त पृ.सं.२५०

२ भजि मन राम चरन दिन राती ।

रसना कस न भज तू हरि को क्यों बैठी अल साती ।

जिनके कहत दहति दुःख दासन सुनि त्रय ताप नसाती ।

लिखा सो सुजन सिया रघुबर को सुनि जुड़ाय हिय छाती ।

संवत सोरह सै एकतीसा जेठ मास छठी स्वाती ।

तुलसीदास इक अरज करत है प्रथम विनय की पाती ॥

– तुलसीदास पृ.सं.२५०

३ 'तुलीदास और उनका काव्य' – पृ. सं. २०६

४ तुलसीदास और उनका काव्य – पृ. सं. २०६

विनयपत्रिका का अर्थ ।

'विनयपत्रिका' का अर्थ है प्रार्थना पत्र, अरजी । यह अरजी तुलसी ने भगवान् राम की सेवा में भेजी है । उनके राम सम्राटों के भी सम्राट है । अतएव उनके दरबार में अरजी पेश करने का तौर-तरीका भी उनकी लोकोत्तर गरिमा के अनुरुप होना चाहिए ।[1] तुलसी का वक्त मुगल सम्राटों का वक्त था और प्रार्थना पत्र सम्राट तक पहुँचाने के लिये आरंभ से ही सभी अधिकारियों को प्रसन्न करने पड़ते थे । ठीक इस विषय को लेकर अपने सम्राट राम तक अपनी अरजी पहुँचाने के लिये तुलसी ने भी गणेश, सूर्य, दुर्गा, गंगा, यमुना और हनुमान[2] आदि को भी प्रसन्न करने के लिये पद लिखे और उनकी सहायता और प्रसन्नता प्राप्त करके बाद में तीन अंग रक्षक को अर्थात् भरत-शत्रुघ्न और लक्ष्मण को प्रसन्न करके बाद में अंतःपुर में प्रवेश करते हैं और अपने महाराज श्री राम से साक्षात्कार पाकर अपनी अरजी सुनाते हैं ।[3] और अंत में राम अरजी को स्वीकार करते हुए अपने हस्ताक्षर भी देते हैं ।[4]

---

१ तुलसीदास काव्य मीमांसा पृ.सं. ४४८

२ पद - १,२,३-१४, १५-१६, १७-२०, २१,३५,३६

३ विनयपत्रिका दीन की बापु आपु ही बांचा ।
हिये हेरि तुलसी लिखी सो सुभाय तही करि बहुरि ।
पूँछिये पाचा ॥ २७७/३ - 'विनयपत्रिका'

४ बिहँसि राम कह्यो सत्य है सुधि मैं हूँ लही है ।
मुदित माथ नावत बनी तुलसी
अनाथ की परी रघुनाथ सही है । - २७९ विनयपत्रिका

'विनयपत्रिका' के विषय में इतना कहने पर अब एक बात तो स्वतः स्पष्ट हो जाती है कि इस ग्रंथ का मूल स्वर भक्ति और दर्शन है । विनयपत्रिका में भक्ति और दर्शन का जितना व्यापक स्वरुप स्पष्ट होता है इतना व्यापक स्वरुप इतने स्पष्ट और सीधे रुप से मानस के सिवा और कईं भी नहीं मिलता है । 'मानस' फिर भी अनेक कथा उपकथाओं को साथ लेकर चलता है परंतु विनयपत्रिका में तो अंत तक अेक ही स्वर और विषय का निर्वाह होता है।

'राम के ईश्वरीय स्वरुप 'विनयपत्रिका' में वर्ण्य विषय से स्पष्ट है कि यह पत्रिका भौतिक नहीं है, आध्यात्मिक है । व्यक्ति देश और काल की सीमा के परे है ।[१] विभिन्न पदों में तुलसी ने अपने जिस दैन्य एवं जिन कमजोरियों का वर्णन किया है वे भवचक्र में पड़े हुए सभी देशों तथा सभी कालों के जीव मात्र की कमजोरियाँ है ।[२]

कलिकाल से उत्पीड़ितों के प्रतिनिधि के रुप में तुलसी राम दरबार में पहुंचकर अपनी फरियाद सुनाते हैं । इस प्रकार यहाँ कवि की अनुभूति व्यक्तिगत न होकर समष्टिगत बन जाती है ।[३]

---

१ तुलसी काव्य मीमांसा पृ. ४४९

२ एहि बिधि सकल जीव जग रोगी
सोक हरष भय प्रीति बियोगी ॥ – रामचरित मानस ७/१२२/१

३ सकल सभा सुनि लै उठी जानी रीति रही है ।
कृपा गरीब निवाज की देखत गरीब की साहब बाँह गही है ।
– विनय २७९

भक्ति

भक्ति की कठिनता

तुलसीने मानस में कदम कदम पर जो सरल और सुलभ बताई है वहीं भक्ति को वि.प. में अति कठिन बताई है जैसे कि हाथी का गंगा का सन्मुख प्रवाह में चलना, और रेत में चीनी मिल जाने पर उसे अलग करने जैसा सूक्ष्म है । कोई रस को जाननेवाली चींटी ही उस शर्करा को पा सकती है वैसे ही कोई बिरला भक्त ही भक्ति को पा सकता है ।[१]

अवतार वंदना

पौराणिक परंपरा में भगवान के अनेक अवतारों में दश अवतारों को प्रमुख माना है । विनयपत्रिका में अनुक्रम से एक ही पद में दशावतार की वंदना की गई है ।[२]

---

१ रघुपति भगति करत कठिनाई ।
कहत सुगम करती अपार जानै सोई जेहि बनि आई ।
जो जेहि कला कुसल ताकहँ सोइ सुलभ सदा सुखकारी ।
सफरी सनमुख जलप्रवाह सुरसरी बहै गज भारी ॥
ज्यों सर्करा मिलै सिकता महँ, बलतें न कोउ बिलगावै ।
अति रसग्य सूच्छम पिपीलिका, बिनु प्रयास पावै ॥

– विनय पद १६७

२ बारीचर वयुष धरि भक्त निस्तार पर, धरणि कृत नावमहिमातिगुर्वी
सकल यज्ञाशमय उग्र विग्रह क्रोर मर्दि दनुजेश उद्धरण उर्वी ॥२॥
कमठ अति विकट तनु कठिन पृष्ठोपरी भ्रमत मंदर, कड्डु सुख मुरारी ।
प्रकट कृत अमृत, गो, इंदिरा इंदु, वृंदार का वृंद आनंदकारी ॥३॥
मनुज मुनि सिध्ध सुर नाग त्रासक दुष्ट दनुज द्विज धर्म मर्जाद हर्ता
अतुल मृगराज वपुधरित विद्दरित अरि भक्त प्रह्लाद-अह्लाद कर्ता ॥४॥
छलन बलि कपट बटु रुप वामन ब्रह्म, भुवनपर्यंत पदतीन करणं
चरणनखनीर त्रैलोक्य-पावन परम, विबूध जननी दुसह शोक हरणं ॥५॥

– विनय ५२

शैव-वैष्णव समन्वय भक्ति

तुलसी ने समन्वयभक्ति - भावना से प्रेरित होकर विनय पत्रिका के एक पद में शिव और विष्णु की स्तुति साथ साथ की है । और दोनों आराध्य देवों की स्तुति से अन्य को भी समन्वय भक्ति की प्रेरणा दी है ।[१]

मानसी पूजा

तुलसी ने सिर्फ कोरे कर्मकांड पर नहीं परंतु मानसिक रुप से श्रद्धा और पूजा पर बल दिया है । विनयपत्रिका को एक पद में मानसी आरती का अति सुंदर चित्रण मिलता है । जिनमें आरती की एक एक वस्तु और अंग को गुणों और मनोभावों द्वारा प्रकट की है ।[२]

---

१ धनुज बन दहन गुन गहन, गोविंद नंदादि आनंद दाताऽविनाशी ।
शंभु, शिव, रुद्र, शंकर, भयंकर भीम घोर तेजायतन क्रोधराशी ॥
अनंत, भगवंत जगदंत अंतक त्राश शमन, श्रीरमन भुवनाभिरामं ।
भूधराधीश जगदीश ईशान, विज्ञानघन, ज्ञानकल्याण धामं ॥२॥

- विनय ४९

२ एसी आरती राम रघुबर की करहि मन ।
हरन दुखदुंद गोविंद आनंद घन ॥१॥

अचरचर रुपहरि, सरबगन, सरबदा बसत, इति वासना धूप दीजै ।
दीन निज बोधगत-कोह-मोह-तम प्रौढ़ अभिमान चित्तवृत्ति छीनै ॥२॥
भाव अतिशय विशद प्रवर नैवेद्य शुभ श्रीरमण परम संतोषकारी ।
प्रेम-तांबूल गतशूल संशय सकल, बिपुल भव बासना बीजहारी ॥३॥
अशुभ शुभकर्म-धृतपूर्ण दशवर्ति का, त्यागपावक, सतोगुण प्रकासं ।
भक्ति-वैराग्य-विज्ञान दीपावली, अर्पी नीराजनं जगनिवासं ॥४॥

- विनय ४७

स्मार्त भक्तिभाव

तुलसीजी स्मार्त वैष्णव थे । स्मार्त धर्म की दो महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं (१) वर्णाश्रम-धर्म-निष्ठा और (२) गणेश[१], सूर्य[२], शिव[३], दुर्गा[४] तथा विष्णु[५] इन पांच देवों की उपासना । विनय पत्रिका में पंच देवों की योजना पूर्ण रुप से स्तवन मिलता है ।

अनौपचारिक सख्यभाव

भागवत् भक्ति के नौ प्रकार में सख्यभक्ति को अष्टमभक्ति मानी गई है। इस चर्चा हम प्रथम अध्याय में कर चुके हैं । 'विनयपत्रिका' में ऐसे पद्य भी उपलब्ध हैं जिनमें उन्होंने विश्वास-विशिष्ट सख्यभाव से राम को खरी-खोटी भी सुनाई है ।[६]

---

१ गाईये गनपति जगबंदन शंकर सुवन भवानीनंदन । ३

२ दीन दयालु दिवाकर देवा । कर मुनि, मनुज, सुरासुर सेवा । २

३ को जाँचिये संभु तजि आन ।
दीनदयालु भगत आरति हर, सब प्रकार समरथ भगवान । ३

४ जयजय जगजननि देवि सुर नरमुनि असुर सेवि ।
भक्ति मुक्ति दायनि - भय-हरणि कालिका १६

५ जपति सच्चिदानंद परब्रह्म-पदविग्रह व्यक्त लीलावतारी
बिकल ब्रह्मादि, सुर, सिद्ध संकोचवश, विमल गुण-गेहन ।
देहधारी - ४३

६ परम पुनित संत कोमल चित्त तिनहिं तुमहिं बनिआई ।
तौ कत बिप्र, व्याध, गनिकहि तारेहु, कछु रही सगाई ?।। ११२-२)
उपरांत देखिये - विनयपत्रिका - १०६/३, २४१/५, २५८/४

षोडषोपचार पूजा

'विनयपत्रिका' में होली फाग और चाँचरी के रुप की पृष्ठभूमि में षोऽषोपचार पूजा भक्ति के साधनस्वरुप है । पुराणों में इस विधान का अत्यंत महत्व है। यहां षोड़षोपचार पूजा की खूबी यह है कि पूर्वोक्त मानसी पूजा की भांति यह पूजन भी मानसिक ही है और विविध गुणों से पूजन अर्चन की बात की है। २० पंक्तियाँ के लंबे पद में से नीचे कुछ उदाहरण दिये गये हैं ।[१]

---

१ श्रीहरि गुरु पद कमल भजहु मन तजि अभिमान ।
जेहि सेवत पाइय हरि सुख-निधान भगवान ॥१॥
परिवा प्रथम प्रेम बिनु राम-मिलन अति दूरि ।
जद्यपि निकट हृदय निजरहे सकल भरपूरि ॥२॥
दुइज द्वैत मति छांड़ी चरहि महिमंडल धीर ।
बिगत मोहमाया-मद हृदय, बसत रघुबीर ॥३॥
तीज त्रिगुण पर परम पुरुष श्रीरमन मुकुंद ।
गुन सुभाव त्यागे बिनु दुरलभ परमानंद ॥४॥
चौथि चारि परिहरहु बुद्धि-मन-चित्त अहँकार ।
बिमल बिचार परमपद निज सुख सहज उदार ॥५॥
पांचई पाँच सरस, रस, शब्द, गंध अस रुप ।
इन्ह कर कहा न कीजिये, बहुरि परब भव-कूप ॥६॥
छठ षटबरन करिय जय जनक सुता-पति लागि ।
रघुपति कृपा बारि बिनु तहिं बुताई लोभागि ॥७॥
सातैं सप्तधातु-निरमित तनु करिय बिचार ।
तेहि तनु केर एक फल कीजै पर-उपकार ॥८॥
..........आदि.......... विनयपत्रिका पद - २०३

प्रपत्ति

तुलसी की भक्ति का स्वरुप प्रपत्यात्मक है । तुलसी की अन्य रचनाओं में भी प्रपत्ति के पद, दोहे और गीत कवित है, परंतु शरणागति के भाव में 'विनयपत्रिका' का स्थान अजोड़ है । उसके आत्मनिवेदनात्मक पदों में भक्ति रस का अत्यंत मर्मस्पर्शी प्रवाह है । अतः संत समाज में उसका विशेष आदर है ।[१]

तुलसी प्रपत्ति को अलग से मोक्ष साधन नहीं मानते । उनकी भक्ति स्वयं प्रपत्ति का ही स्वरुप है, उन्होंने भागवत पुराण[२] और 'आध्यात्म रामायण' दोनों की नवधा भक्तियों के विभिन्न रुपों का 'विनयपत्रिका' में विविध स्थानों पर निरुपण किया है ।

'भागवत' की नवधा भक्ति के अंतर्गत जिसे आत्मनिवेदन कहा गया है वही पांचरात्र आगम और विशिष्टाद्वैतवाद आदि में सिद्धांततः प्रतिपादित शरणागति अथवा प्रपत्ति है ।[३]

'विनयपत्रिका' में प्रपत्ति के विविध रुपों का मर्मस्पर्शी वर्णन है । जिनमें तुलसी का अमायिक आत्मनिवेदन है जिनके कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं ।[४]

---

१ तुलसी काव्य मीमांसा – पृ. ४५१

२ भागवत्पुराण – ७/५/२३

३ तुलसी काव्य मीमांसा – पृ. ४५९

४ तुलसीदास रघुनाथ कृपा को जोवत पंथ खस्यो । विनय – २३९/७
माधव अब न द्रवहु कहि लेखे ।
प्रनतपाल पन तोर मोर पन जिअहुँ कमलपद देखे ।। विनय – ३१३/१-२
तुलसीदास प्रभु कृपा करहू अब मैं निज दोष कछू नहिं गोयो । विनय २४५/४

यहां याद रहे कि 'गीता' आदि में जो 'आर्त भक्ति' या आर्तभक्ति की बात कही है[1] इस बात पर आधारित आर्त-प्रपन्न भाव तुलसी का नहीं है। तुलसी की एकमात्र कामना प्रभुप्राप्ति है। तुलसी की भक्ति पूर्णतः निष्काम है। आर्त भक्त सकाम होता है। प्रतिष्ठाहीन, पद हीन, धनहीन, समाज और संसार के दुःखों से दीनहीन या शक्तिहीन किसी बीमार की यह भक्ति नहीं है तुलसी कुछ खोये हुए को पाना नहीं चाहता है। अन्य आर्त भक्त अपनी खोई हुई सुख, समृधि की पुनः प्राप्ति के लिये भक्ति करते हैं परंतु यहां ऐसा नहीं है।

विनयपत्रिका के जिन पदों में भवरोग से मुक्त होने की प्रार्थना मिलती है वहां ज्ञानतत्व का निरुपण है। परंतु यह निरुपण आर्तभाव से हुआ है।[1] और जिन पदों में राम और रामभक्ति को ही परमप्राप्य माना है उनमें ज्ञानी की भक्ति है।[3]

शास्त्रकारों ने प्रपत्ति या शरणागति की छः विधाएं बतलायी है।[४]

---

१ गीता ७/३६

२ विनयपत्रिका - ६०, ११७, १२५, १४७

३ विनयपत्रिका - ८५, ९८, १०३, १७२, १७४

४ आनुकूलस्य संकल्प प्रातिकूलस्य वर्जनम्।
रक्षिष्तीति विश्वासो गोप्तृत्ववरणं तथा।
आत्मनिरक्षेपकार्पण्ये षड्विधा शरणागतिः॥
(अहिर्बुहन्यसंहिता - ३७/२८-२९ - तुलसीकाव्य मीमांसा में से - पृ. ४६०)

शास्त्र में बताई गई शरणागति की सभी विधाओं का विनयपत्रिका में पूरा पूरा निर्वाह होता है जिन्हें हम एक एक करके देखेंगे ।

१) आनुकुल्यस्य संकल्पः :-

यह भक्त की अभिलाषा है कि भगवान् उस पर हमेशा अनुकूल बने रहे, यदि स्वामी सेवक पर सदा अनुकूल हो तो, जैसे सेवक निर्भय बना रहता है वैसे ही जो भगवान भक्त पर अनुकूल हो तो भक्त भी अभय बन जाता है। इतना ही नहीं परंतु तुलसी कहते हैं कि सभी लौकिक प्रेम के नाते को तोड़ दूंगा और सिर्फ प्रभु के साथ नाता रखूंगा । मेरे सारे कर्मो का भार प्रभु पर छोड़ दूंगा । मेरे सारे अंग मेरे स्वामी के विषय में ही लगा दूंगा । मेरा सारा जीवन जानकी जीवन श्री राम पर न्योछावर कर दूंगा । मेरे स्वामी की चरण छोड़कर अब मैं कहीं भी नहीं जाऊंगा ।[१]

---

१ जानकी जीवन की बलि जैहौं ।
चित कहै राम-सीय-पद परिहरि अबन कहूँ चलि जैहौं ।
उपजी उर प्रतीति सपनेहु सुख, प्रभु-पद बिमुख न पैहौं ।
मन समेत या तनके बासिन्ह इहै सिखावन दैहौं ॥२॥
श्रवननि और कथा नहिं सुनिहौं, रसना और नगैहों ।
रोकिहौं नयन बिलोकत औरहिं, सीस ईस ही नैहों ॥३॥
नातौ, नैह नाथसों करि सब नातो-नेह बहैहों ।
यह छर भार ताहि तुलसी जग जाकोदास कहैहों ॥ विनय-१०४

२) प्रातिकूल्यस्य वर्जनम् :-

अर्थात् भगवान् के प्रतिकूल व्यक्ति, भाव, चर्चा आदि से सर्वदा विमुख रहना ।

उपरोक्त भावना का दिव्य स्पर्श करते हुए उच्च विचार तुलसी के एक पदमें प्राप्त होते हैं । अपने इष्ट जिन्हें प्रिय नहीं है ऐसे लोगों को करोड़ों बैरी मानकर त्याज्य समझने को कहते हैं । भगवान का विरोध करनेवाले बाप का त्याग प्रह्लादने किया, भाई का त्याग विभीषण ने किया, माँ का त्याग भरत ने किया, गुरु का त्याग बलिराजाने किया, गोपियों ने पति का त्याग किया और ऐसा करके वे सब सुखी हो गये । अर्थात् ईश्वर विरोधी तत्वोंको त्याग करने में चाहे कितना भी कष्ट हो परंतु अंत में परम सुख की प्राप्ति होती है । प्रभु के शरण परमपद को देनेवाले हैं ।[1]

---

१ जाके प्रिय न राम बैदेही ।
तजिये ताहि कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही ।
तज्योपिता प्रह्लाद बिभीषन बंधु, भरत महतारी
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज-बनितन्हि भयेमुद मंगलकारी ।
नाते नेह राम के मनितय सुहद सुसेव्य जहाँ लौं ।
अंजन कहा आंखि जेहिफूटै, बहुतक कहौ कहां लौं ।
तुलसी सो सब भाँति परमहित पूज्य प्रानते प्यारो ।
जासों होय सनेह राम पद, हतो मनो हमारो ।

विनय-१७४

३) रक्षिष्यतीति विश्वासः :-

भक्त का यह दृढ़ विश्वास होता है कि 'हमारे रक्षक भगवान है' । वे आदि से भक्तों की रक्षा करते आये हैं और करेंगे । ऐसा परम विश्वास प्रकट करते हुए तुलसी विनयपत्रिका के एक पदमें गाते हैं कि जिस पर श्री रघुपति की कृपा है उसे डर कैसा ? बैरी के करोड़ों उपाय से भी भक्त का बाल भी बांका नहीं हो सकता है क्योंकि उसका रक्षक स्वयं राम है । प्रहलाद, हाथी, बिभीषन, ध्रुव, अंबरीष आदि भक्तों के जीवन का उदाहरण और इस कथा में से आश्वासन लेकर तुलसी अटल विश्वास के साथ कहते हैं कि मेरा राम मेरी हर हाल में रक्षा करेगा ।[१]

---

१ जो पै कृपा रघुपति कृपालु की, बैर और के कहा सरै ।
होई न बांको बार भगत को, जो कोउ कोटि उपाय करे ।१।
तकै नीचु जो मीचु साधु की सो पामर तेहि मीचु मरे ।
बेद बिदित प्रह्लाद कथा सुनि को न भगति-पथ पाउँ धरे? ।२।
गज उधारी हरि थप्यो बिभिषन, ध्रुव अविचल कबहू न हरै ।
अंबरीष की साप सुरति करि, अजहुं महामुनि ग्लानि करे ।३।
सो धौं कहा जु न कियो सुजोधन अबुध आपने मान जरै ।
प्रभु प्रसाद सौभाग्य बिजय जस पांडव कीन्ह बरिआइ बरै ।४।
जोई जोइ कूप खनैगो पर कहँ, सो सठ फिरितिहि कूप परै ।
सपनेहुँ सुख न संतद्रोही कहँ सुरतरू सोउ विष करनि करै ।५।
हैं काके द्वै सीस ईसके जो हठि जनकी सीवँ चरै ।
तुलसिदास रघुबीर-बाहुबल सदा अभय काहू न डरै ।६।

विनय-१३७

४) गोमृत्वे वरणम् :-

'भगवान हमारा रक्षक है' - ऐसा सिर्फ मान लेने से भक्त संतुष्ट नहीं होता वह तो वस्तुतः रुप में प्रभु का रक्षक के रुप में वरण भी करता है। मानव मात्र अपने से समर्थ की शरणागति को स्वीकार करता है । भगवान तो समर्थों से भी समर्थ है, भक्त यह परम समर्थ भगवान की शरणागति स्वीकारता है ।

संत तुलसी अपने दुर्गुणों से भरे मन को साधन हीन देह को और विषयासक्त मति को पूर्ण भरोसे के साथ श्री राम के चरणमें समर्पित करते हैं ।

---

१ ताहि तें आयो सरन सबेरें ।
ग्यान बिराग भगति साधन कछु सपनेहुँ नाथ न मेरे ।
लोभ-मोह मद-काम क्रोध रिपु फिरत रैनि-दिन घेरें ।
तिनहिं मिले मन भयो-कुपथ-रत, फिरे तिहारेहि फेरें ॥२॥
दोष-निलय यह बिषय सोकप्रद कहत संत श्रृति हेरें ।
जानत अनुराग तहाँ अति सो, हरि तुम्हारे प्रेरें ॥३॥
बिषय पियूष सम करहु अगिनि हिम, तारि सकहु बिनु बेरें ।
तुम सम ईस कृपालु परम हित पुनि न पाइहौं हरे ॥४॥
यह जिय जानि रहौं सब तसि रघुबीर भरोसें तेरे ।
तुलसिदास यह बिपति बागुरौ तुम्हहि सो बनै निबेरें ॥५॥

विनय - १८७

५) आत्मनिक्षेप :-

अर्थात् भगवान को अपने रक्षक के रूप में स्वीकार करने के बाद अपने सर्वस्व को मन-वचन-कर्म से प्रभु के चरणों में अर्पण कर देता है ।

विनयपत्रिका के एक पदमें तुलसी अर्थात् नाचते नाचते थका हारा जीव प्रभु की शरण में आया है और वहां ही हंमेशा हंमेशा के लिये पड़ा रहना चाहते हैं । अपनी थकी हुई मन, बुद्धि, देह, इन्द्रियाँ आदि थककर प्रभु की शरण स्वीकारते हैं । संसार के भय से व्याकुल जीव परम रक्षक श्री राम की शरणागति स्वीकार करके वहां ही स्वयं को पडे रहने देने की प्रार्थना करता है ।[१]

---

१ नाचत ही निसि दिवस मरयो ।
तब ही तेन भयो हरि थिर जिबतें जिव नाम धरयो ॥१॥
बहु बासना बिबिध कंचुकि भूषन लोभादि भरयो ।
चर अस अचर गगन जल थलपे कोन न स्वांग करयो ॥२॥
देव अनुज, मुनि, नाग, मनुज नहिं जाँचत कोउ उबरयो ।
मेरो दुसर दरिद्र, दोष, दुःख काहू तौ न हरयो ॥३॥
थके नयन पद पानि, सुमति, बल संग सकल बिछुरयो ।
अब रघुनाथ सरन आयो जन, भव भय बिकल डरयो ॥४॥
जेहि गुनतें बस होहु रीझि करि, सो मोहि सब बिसरयो ।
तुलसीदास निज भवन द्वार प्रभु दीजै रहन परयो ॥५॥

विनय - ९१

६) कार्पण्यम् - अर्थात् अत्यंत दीनता ।

तुलसी भागवदीय नवधाभक्ति के अंतर्गत की दास्यभक्ति को रग रगमें उतार चुके हैं । दीनताभाव दास्यभक्ति का मुख्यभाव है । भक्त स्वयं को दीन और प्रभु को महान मानकर उसके प्रति आत्मनिवेदन करता है । भक्त पग पग पर अपनी दीनता, हीनता, पाप और असमर्थता का प्रभु चरण में निवेदन करता है । प्रभु की महानता को स्वीकार करता है, इतना ही नहीं, परंतु प्रभु के सामर्थ्य का महिमागान करता है और स्वयं के प्रभु के शरण में समर्पित करता है ।[1]

---

१ माधव मो समान जगमाहीं ।
सबबिधि हीन, मलीन, दीन, अति, लीन बिषय कोउ नाही ॥१॥
तुम सम हेतुरहित कृपालु आरत-हित ईस न त्यागी ।
मैं दुख - सोक - बिकल कृपालु । केहि कारन दया न लागी ॥२॥
नाहिं न कछु औगुन तुम्हार, अपराध मोर मैं माना ।
ग्यान भवन तनु दियेहु नाथ सोउ पाय न मैं प्रभु जाना ॥३॥
बेनु करील, श्रीखंड बसंतहि दूषन मृषा लगावै ।
सरा रहित हत भाग्य सुरभि, पल्लव सो कहु किमिपावै ॥४॥
सब प्रकार मैं कठिन, मृदुल हरि दृढ़ बिचार जिय मोरे ।
तुलसिदास प्रभु मोह शृंखला, छुटिहि तुम्हारे छोरो ॥५॥

विनय - ११४

कवितावली में भक्ति

ग्रंथ परिचय

कवितावली तुलसीदासजी का एक मुक्तक काव्यसंग्रह है । वह संग्रह सात काण्डों में है और कुल छंद संख्या ३६९ है । तुलसी दास के ग्रंथो में राम चरित मानस के बाद 'कवितावली' को एक प्रमुख स्थान दिया जाता है । केवल इसलिए नहीं कि इसमें नवों रसों में उच्च कोटि की कविता है, बल्कि इसलिए भी कि इससे तुलसीदासजी की जीवनी और तत्कालीन अन्य घटनाओं पर भी प्रकाश पड़ता है ।[१]

कवितावली का मानस की भांति अंगीरस भक्तिरस नहीं है । माना की 'कवितावली' भक्तिप्रधान कृति है, परंतु भक्ति को उसका अंगी रस नहीं माना जा सकता । उसमें भक्ति अनुस्थूल नहीं है । तीसरे और चौथे कांड में भक्ति बिल्कुल ही शून्य है । पहले, दूसरे और पाँचवे और छठे कांडो के कुछ पद ही भक्ति के अभिव्यंजक है । हाँ उत्तरकांड में भक्ति की अतिशयता पायी जाती है ।[२]

---

१ तुलसी और उनका काव्य पृ. १७६

२ तुलसी काव्य मीमांसा पृ. ४७४ चतुर्थ परिच्छेद ।

दुःख निवृत्ति के लिये भक्ति ही अमोघ साधन ।

तुलसी ने कवितावली में दुःख निवृत्ति के अनेक साधन बतलाये हैं - जैसे कि धर्म, कर्म, वैराग्य, ज्ञान, योग आदि - परंतु प्रभु श्री राम की भक्ति के बिना और कोई दुःख नहीं हर सकता - ऐसा तुलसी का दृढ़ विश्वास है।[१]

दीनभाव के साथ नामस्मरण ।

तुलसी की दृष्टि से कलियुग में भक्ति के अन्य विधि विधान भी अति कठिन है, इसलिये नामस्मरण अथवा स्मरण भक्ति पर ज्यादा बल दिया है ।[२]

---

१ जपजोग बिराग महामख साधन दान दया दम कोटि करै ।
मुनि सिद्ध सुरेशगनेश महेश से सेवत जन्म अनेक मरे ॥
निगमागम ज्ञान पुरान पढ़ै तपसानल में जुग पुज वीरै ।
मन सों पन रोपि कहै तुलसी रघुनाथ बिना दुःख कौन हरै ?

- कवितावली - ७/५५

एकु ही भरोसो राम । रावरो कहावत हौं
रावरे दयालु दीनबंधु । मेरी दीनता । ७/६२
भले सुकृती के संग मोहि तुलाँ तैलिए तौ,
नाम के प्रशाद भारु मेरी ओर नमिहैं । ७/७१

२ रामही के नामतें जो होई सोई नीको लागै,
एसोई सुभाउ कछु तुलसी के मन को । ७/७६

चातकभाव

तुलसी की भक्ति का आदर्श चातक है, जैसे चातक पक्षी सिर्फ स्वाति नक्षत्र के प्रथम बुंद को मुख में ग्रहण करे तभी तुष्ट होता है, इसके अतिरिक्त सभी प्रकार के जल का त्याग करता है, स्वाति के बुंद की अभिलाषा में महीनों तक प्यासा रहता है उसी प्रकार भक्त भी प्रभुदर्शन से ही तुष्ट होता है । सिर्फ प्रभु दर्शन से ही उसकी तृषातृप्त होती है ।[1]

प्रपत्ति

प्रपत्ति की छः विधाएँ है । (१) अनुकूलता का संकल्प (२) प्रतिकूलता का त्याग (३) भगवान् के रक्षत्व में विश्वास (४) रक्षक रुप में उनका वरण (५) आत्मनिक्षेप (६) कार्पण्य – इन छओं विधाओं का निर्वाह कवितावली में विविध स्थान पर होता है ।[2]

---

१ तुलसी अब रामको दास कहाई,
हियें धरु चातक की धरती – कविता – ७/३२

२– १ सतिभायँ सदा छल छाड़ि सवै,
'तुलसी' जो रहै रघुबीरको है ॥ ७/३४
२ करु संग सुसील सुसंतन सौ,
तजि कूर, कुपंथ कुसाथहि रे ॥ ७/२९
३ 'तुलसी' तजि आन भरोस भजें,
भगवानु भलो करिहैं जनको ॥७/९
४ तुलसी । भजु बारिद दोष दवानल
संकट कोटि कृपानहि रे ॥ ७/२८
५ गुनगेहु सनेहको भाजनु सो,
सब ही सों उठाई कहौं भुज द्वै । ७/३४
६ एकु ही भरोसो राम । रावरो कहावत हौं
रावरे दयालु दीनबंधु । मेरी दीनता ॥ ७/६२

भक्ति में विनय की सात भूमिका ।

भक्ति पथ में विनय की सात भूमिकाएँ हैं (१) दीनता (२) मानमर्षण (३) भयदर्शन (४) भर्त्सना (५) आश्वासन (६) मनोराज्य (७) विचारणा ।[१]

कवितावली में इन सातों भूमिकाओं का विविध स्थानों पर निर्वाह हुआ है । यह सातों भूमिका नीचे अनुक्रम से देखिये ।

---

१ तुलसी काव्य मीमांसा पृ. ४७७

२
१ स्वारथ को परमारथ को रघुनाथु सो
साहेबु, खोरि न लाई । ७/५७
२ हौं तो सदा खर को असवार,
तिहारोई नामु गयंद चढ़ायो ॥ ७/६०
३ ममता बस तैं सब भूलि गयो,
भयो भोरु महा भय, भागहि रे ॥ ७/३१
४ ताको कहाई, कहै तुलसी ।
तूँ लाजाहि न मागत कूकुर कौरहि ॥ ७/२६
५ कौन की त्रास करै तुलसी जो पै,
राखिहै राम, तौह मारिहै को रे ॥ ७/४७
६ जानत जहानु मन मेरे हूँ गुमान बड़ो,
मान्यो मैं न दूसरों, न मानत न मानिहौं ।७/६३
७ तहां बिनु कारन राम कृपाल
बिसाल भुजा गहि कढ़ि लेवैया ॥ ७/५१

आर्तभक्ति

आर्तभक्ति का सुंदर उदाहरण 'हनुमान बाहुक' है । 'हनुमान बाहुक' में तुलसी का आर्तनिवेदन अत्यंत मर्मस्पर्शी है ।[1]

गीतावली में भक्ति ।

ग्रंथ परिचय

'गीतावली' तुलसीदासजी के स्फुट गीतों का संग्रह है । इसका नाम 'पदावली' भी है । यह भी 'मानस' की भांति सात कांडों में विभाजित है । कांड के अनुसार संपूर्ण पदों की संख्या ३२८ है ।[2]

उसके अधिकांश गीत वात्सल्य, श्रृंगार अथवा भक्तिरस के व्यंजक है । 'गीतावली' का वात्सल्य-वर्णन तुलसी साहित्य में सर्वश्रेष्ठ है ।[3]

१-अ) आरत की आरति निवारि बेको तिहूँ पुर,
तुलसी को साहेब हठीलो हनुमान भो ॥ ह.बा. १९

ब) बिगरी सँवार अंजनीकुमार कीजे मोहिं,
जैसे होत आये हनुमानके निवाजे हैं ॥ ह.बा. १५

क) साहसी समीर के दुलारे रघुबीरजूके
बांट पीर महाबीर बेगि ही निवारीये ह.बा.२०

ड) चेरो तेरो तुलसी तूमेरो कह्यो रामदूत ।
ढीले तेरी बीर मोहि पीरतें पिराति ॥ ३० ॥

इ) श्री रघुबीर निवारिये पीर ।
रहौ दरबार परो लहि लूलो ॥ ३६ ॥

२ तुलसीदास और उनका काव्य पृ. १८२

३ तुलसी काव्य मीमांसा पृ. ४४०

'गीतावली' में 'रामचरित मानस' या 'विनयपत्रिका' की भाँति प्रमुखतः दार्शनिक और भक्ति प्रधान काव्य नहीं है तथापि बहुत से गीतों की अंतिम पंक्तियों में कवि हृदय का प्रमुख भाव भक्ति प्रकट हुए बिना नहीं रहता है। कवितावली के अनेक पदों में भक्ति का न्यूनाधिक दर्शन हुए बिना नहीं रहता।

रामभक्ति में निष्ठा

गीतावली के कई पदों में श्रीराम भक्ति में परम निष्ठा का दर्शन होता है।[1]

---

१ दीन-हित बिरद पुराननि गायो।
आरत बंधु, कृपालु मृदुल चित जानि सरत हौं आयो।
करपंकज सिर परसि अभय कियो जन पर हेतु दिखाये।
तुलसिदास रघुबीर भजन करि को न परम पद पायो। गीतावली-५/४४
गयेराम सरन सबको भलो।....
गनी गरीब, बडो-छोटो, बुध-मूढ़ हीनबल-अति बलो।
तुलसी सुमिरत न सबनिको मंगलमय नभ-जल थलो॥ ५/४२
सुजस सुनि श्रवण हौं नाथ। अमो सरन।
उपल केवट गीध-सबरी-संसृति समन।
दास तुलसी सदयसह्य रघुबंसमनि।
'पाहि' कहे काहि कीन्हो न तारन तरन॥ ५/४३
तुलसीदास तजि आस-त्रास सब ऐसे प्रभु कहँ गाउ। ५/४५
तुलसीदास प्रभु कोसलपति सब प्रकार बरियो। ५/४६
सुमिरत श्री रघुबीरजी की बाहैं.... ।
करि आईं, करिहैं, करनी हैं तुलसिदास दासनिपर छाहैं। ७/१३
पदपदुम गरीबनिवाज के...
तुलसी 'पाहि' कहत नत पालक मोहु से निपट निकाजके। ५/२९
महाराज रामकहँ जाउँगो... ।
तुलसी पट अतरे ओठिहौं, उबरी जूठनि खाउँगो। ५/३०
रामचरन अभिराम कामप्रद तीरथराज बिराजै .... ।
सब सुख सुलभ सद्य तुलसी प्रभु पद प्रयाग अनुरागे। ७/१५
रामचंद्र करकंज कामतरु बलदेव हितकारी..... ।
सुमिरत हिय दुलसत तुलसी अनुराग उमगि गुन गाए। ७/१४

तुलसी साहित्य में दर्शन ।

दोहावली में तत्वदृष्टि दर्शन

ब्रह्मराम / ईश्वर महिमा / जीव / जीव की तीन दशाएँ / सृष्टि / माया की फौज / माया की दुर्ज्ञेयता/ माया की प्रबलता और इससे मुक्त होने का उपाय / ज्ञान ज्ञान की कठिनता ।

विनयपत्रिका में दर्शन

ब्रह्मराम सच्चिदानंद स्वरुप / राम की माया / जगत् / जीव / मोक्ष साधन ।

कवितावली में दर्शन

निर्गुण की अपेक्षा सगुण अधिक रुचिकर / सर्वशक्तिमान राम / ब्रह्म का अवतार क्यों ? जगत् / जीव / दुःख निवृत्ति के साधन /

गीतावली में दर्शन

ब्रह्मराम का सगुण रुप / ब्रह्म जीव और माया ।

दोहावली में दर्शन

'मानस' और विनयपत्रिका की अपेक्षा दोहावली में दर्शन के बहुत कमतत्व है । परंतु यह तत्व परंपरागत वेदोक्त वर्णनों की ही पुष्टि करते हैं ।

ब्रह्मराम

वेदों ने जिसके लिये नेति, नेति, कह दिया है – वे राम बुद्धि और वाणी से पर है ।[1]

ईश्वरमहिमा

माया, जीव, सुभाव, गुण, काल कर्म आदि शून्य समान है वह सब ईश रुपी अंक की शक्ति जुड़ने से बढ़ते हैं और ईश्वर शक्ति के बिना शून्य ही रह जाते हैं ।[2]

जीव

जैसे दर्पण में छाया किस रास्ते से आती है और किस रास्ते से निकलती है ? इस बात का पता नहीं चलता है ठीक इसी तरह जीव का शरीर प्रवेश भी ऐसी ही प्रक्रिया है ।[3]

---

१ राम सरुप तुम्हारबचन अगोचर बुद्धि पर ।
अबिगत अकथ अपार नेति नेति नित निगम कह । दोहा–१९९

२ माया जीव सुभाग गुनकाल करम महदादि ।
हँस अंक तें बढ़त सब ईस अंक बिनु बादि । दोहा–२००

३ केहिं मग प्रबिसति जाति केहिं कटुंदरपन में छाहँ ।
तुलसी ज्यों जग जीव गति करी जीव के नाहँ । दोहा – २४४

जीव की तीन दशाएँ

जागृत स्वप्न और सुषुप्ति में जीव की जो दशाएँ होती है इसका तुलसीने सिर्फ एक ही दोहे में कितना मार्मिक वर्णन किया है ![1]

सृष्टि

सृष्टि स्वप्नवत् है अर्थात् जगत्मिथ्या है अर्थात् सर्वजगत् प्रपंचमय है ।[2]

माया की फौज

माया की फौज सारे संसार में फैली हुई है और इससे पर कई भी नहीं रह सकता ।[3]

माया की दुर्ज्ञेयता

स्वयं ईश्वर ही जीव के रुप में नींद में सो रहे हैं और स्वप्नवत् काम कर रहें हैं । माया के स्वामी की इस माया को जानना कठिन है ।[4]

---

१ जीव सीव सम सुख सयन सपने कछु करतूति
जागत दीन मलीन सोइ बिकल बिषाद बिभूति । २४६

२ सपने होइ भिखारि नृपु रंकु नाकपति होई ।
जागें लाभुन हानि कछु तिमि प्रपंच जियँ जोई । २४७

३ ब्यापि रहेउ संसार महुँ माया कहक प्रचंड ।
सेनापति कामादि मद दंभ कपट पाषंड । २६३

४ सुखसागर सुख नींद बस सपने सब करतार ।
माया माया नाथ की को जग जाननिहार । २४५

माया की प्रबलता और इससे तरने का उपाय

तुलसी के मत से देव या मनुष्य कोई भी माया से अछूता नहीं रह सकता है । हां, केवल ईश्वर भवन ही इससे बचने का उपाय है ।[1]

ज्ञान

परमार्थ की पहचान अर्थात् सत्य की पहचान ही ज्ञान है, परंतु सत्य को जानने पर भी जो बुद्धि विषयासक्त रहती हो तो ऐसा ज्ञान निरर्थक है।[2]

ज्ञान की कठिनता

ज्ञान कहने में अर्थात् समझाने में समझने में और इसका साधन करने में भी कठिन है । कभी ज्ञान प्राप्त हो भी गया तो इसे बचाये रखना भी कठिन है ।[3]

---

१ सुर नर मुनि कोउ नाहिं जेहि न मोह माया प्रबल
अस बिचारि मन माहिं भजिअ महामाया पतिहि ॥२७६॥

२ परमारथ पहिचानहि मति लसति विषयँ लपतानि ।
निकसि चिता तें अधजरित मानहुँ सती परानि ॥२५३॥

३ कहत कठिन समुझत कठिन साधन कठिन बिबेक ।
होइ धुनाच्छर न्याय जौं पुनि प्रथ्यूह अनेक ॥२७३॥

विनयपत्रिका में दर्शन

'विनयपत्रिका' में तुलसी ने अपने दार्शनिक विचारों को स्तुतियों के क्रम में प्रकट किये हैं जिसे हम एक-एक करके समझने का प्रयत्न करेंगे ।

ब्रह्मराम

तुलसी के ब्रह्मराम सच्चिदानंद स्वरुप, आनंदघन और सर्वज्ञ है ।[1] वह ब्रह्म सृष्टि के रचयिता, पालक, पोषक और नाशक भी है तथा ब्रह्मा-विष्णु और शिव तथा शक्ति आदि उन्हीं की शक्ति से शक्तिमान है ।[2]

---

१ सच्चिदानंद व्यापकानंद परब्रह्मपद बिग्रहव्यक्त लीलावतारी ।विनय-४३/१

सच्चिदानंद आनंदकांदाकरं बिस्वबिश्राम रामाभिरामं । ५१/१

नित्य निर्मम नित्यमुक्त निर्मान हरिज्ञानधन सच्चिदानंदमूलं ।५३/६

२ बिस्वधृत बिस्वहित अजित गोतीत सिव बिस्वपालनहरन बिस्वकर्ता । ६१/८

– सर्व रक्षक सर्व भक्षकाध्यक्ष कूटस्थ गूढ़ार्चि भक्तानुकूलं । ५३/६

– विस्वपोषन भरन विश्वकारन करन
सरन तुलसीदास त्रासहंता । ५५/६

– हरिहि हरिता बिधिहि बिधिता
सिवहि सिवता जो दई । १३५/३

तुलसी का ब्रह्मराम अनिर्वचनीय है । निर्गुण और सगुण दोनों उनके ही रूप है । वे दिव्यगुणनिधि है और परस्पर विरोधी गुणों के आश्रय है ।[१]

ब्रह्मराम सज्जनों की रक्षा हेतु, धरती के भार को हरने के लिए तथा धर्म की स्थापना के लिए विविध अवतार धारण करते हैं ।[२]

---

१ अमल अनवद्य अद्वैत निर्गुण सगुन ब्रह्म सुमिरमि नरभूपरूपे । ५०/८

– वरद वनदाभबागीस बिस्वातमा बिरज बैकुंठमंदिर बिहारी ।
ब्यापक ब्योम बंदास बामन बिभो ब्रह्मबिद ब्रह्म चिंतापहारी ॥ ५६/३

– अजित निरुपाधि गोतीतमब्यक्त बिभुमेकमनवद्य मजमद्वितीयं ।
प्राकृतं प्रगट परमातमा परमहित प्रेरकानंद बंदे तुरीयं ॥...
सिद्ध साधक साध्य बाच्यबाचकरुप मंत्रजापकजाप्य सृष्टिस्रष्टा ।
परम कारन कंज–नाभ जलदाभतनु सगुन निर्गुण सकलदृश्यद्रष्टा ॥ ५३/३, ७

२ जब जब जगलाल व्याकुल करम काल सब भूप भये भूतलभरन ।
तब तब तनु धरि भूमिभार दूरि करि–थापे–मुनि सुर साधु–आश्रम बरन ॥
२४८/२

– बिकल ब्रह्मादि सुर सिद्ध संकोचबश बिमलगुनगेह नरदेहधारी । ४३/१

– भूमिभर भारहर प्रगट परमातमा ब्रह्म नर रूप धर भक्त हेतू । ५२/७

राम की माया

'मानस' के अनुसार 'माया' राम की शक्ति है और वह प्रभु की सहायता हेतु सीता के रुप में राम के साथ साथ अवतार लेती है । उसमें दो रूप है – विद्या और अविद्या ।[1] विद्यारुपी माया कल्याणकारी है परंतु अविद्या अज्ञान का कारण, दु:ख देनेवाली और जीव को संसार चक्र में भटकानेवाली है । जीव को वश करनेवाली माया श्री राम की दासी के समान है ।[2]

---

१ मानस अरण्यकांड

२ करम काल सुभाउ गुन दोष जीव जग
माया तें सो सभै भौंह चकित चहनि ।
ईसनि दिगीसनि जोगी सनि मुनिसनि ।
हू छोड़ति छोड़ाये ते गहाये तें गहति ॥ २४६/३

– जाकी माया बसबिरंचि सिवनाचत पार न पायो । १८/३

– देव दनुज मुनि नाग मुज सब माया बिबस बिचारे । १०९/३

– 'जाकी बिषय माया गुननई,
'जेहि किये जीवनिकाय बस' । १३६/४

सृष्टिप्रक्रिया के वर्णन में तुलसी ने वैष्णव वेदांत और सांख्य का समन्वय किया है । उसमें दो बातें मुख्य है - (१) माया राम की अभिन्न शक्ति है और जगत् राम का अविकृत परिणाम है । (२) माया ही प्रकृति के रुप में जगत् का निर्माण करती है । रचना का क्रम है - प्रकृति से महत्तत्व, उससे अहंकार, उससे मन, इंद्रियाधिष्ठाता देवता, दस इन्द्रियाँ, पांच तन्मात्रा और पंचमहाभूत उत्पन्न हुई ।[1]

विनय पत्रिका में भी यही क्रम और समन्वित सिद्धांत स्पष्ट होता है ।[2] विनयपत्रिका के चौवनवें पद में केवल वैष्णव वेदांत और सांख्य ही नहीं परंतु न्याय, वैशेषिक, शैव और शाक्तमन का भी समन्वय किया है ।[3]

---

१ तुलसी काव्य मीमांसा पृ. ४५४

२ प्रकृति महतत्व सब्दादि गुण देवता ब्योय मरुदग्नि अमलांबु उर्बी ।
बुद्धिमन इंद्रिय प्रान चित्तातमा काल परमानु चिच्छक्ति गुर्वी ॥
सर्बमेवात्र त्वद्रुप भूपालमनि व्यक्तमव्यक्त गतभेद बिस्नो ।
भुवन भवदंस कामारिबंदित परद्वंद मंदाकिनी जनक जिष्नो ॥
आदिमध्यांत भगवंत त्वे सर्वगतमीस पस्यंति ये ब्रह्मवादी ।
यथा पटतंतु घटमृत्तिका सर्वस्त्रग दासकरि कनककटकांगदादी ॥
५४/२-४

३ अचर रुप हरि सरबगत सरबदाबसत ४७/२
उपरांत देखिये विनय - ४९/३, ५०/३, १४२/२ २०३/३५, २०५/३

जगत्

विनयपत्रिका के कुछ पदों में जगत् को स्पष्ट रुप से 'असत्' या झूठ कहा है[1] तो यही तुलसी ने 'मानस' में सर्व जगत् को रामरुप जानकर, मानकर उसकी सत्यता का स्वीकार किया है ।[2]

'परस्पर विरोधी प्रतीति होनेवाली उक्तियों का समाधान यह है कि जगत् प्रवाह रुप से सत्य है । किंतु उसका दृश्यमानरुप परिवर्तनशील होने के कारण असत्य है ।[3] तुलसी का तात्पर्य है कि ज्ञान का उदय होने पर जगत्का दृश्यमान रुप तिरोहित हो जाता है और वह रामरुप में दिखायी देने लगता है ।[4] जगत् राम की लीला का विलास है । यह तथ्य जीव की समझ में तब आता है जब रामभक्ति के जल से उसका मनोमल धुल जाता है ।[5]

---

१ "श्रुति गुरु साधु स्मृति संमत यह दृश्य असत दुखकारी ।"
"तुलसीदास सब बिधि प्रपंच जग-जदपि झूठ श्रुति गावै ।"
"जद्यपि मृषा सत्य भासै जब लगि नहिं कृपा तुम्हारी ।"
"अर्थ अविद्यमान जानिय संसृति नहिं जाइ गोसाईं ।"
"जग नभबाटिका रही है फल फूली रे ।"
"बूड्यो मृगबारी खायो जेवरी का साँप रे ।"
"स्त्रग महँ सर्प बिपुल भयदायक प्रगट होइ अबिचारे ।"
"जो जग मृषा तापत्रय अनुभव होइ कहहु केहि लेखे ।"
विनयपत्रिका - १२०/४, १२१/५, १२०/१, १२०/२, ६६/४, ७३/२, १२२/३, १२१/२-३ ।

२ सियाराम मय सब जग जानि - बालकांड - मानस

३ तुलसी काव्या मीमांसा पृ. ४५५

४ तुलसिदास जग आपु सहित जब लगि निरमूल न जाई । १२२/५

५ रघुपति भगति बारि छालित चित बिनु प्रयास ही सूझै ।
तुलसिदास कह चिद बिलास जग बूझत बूझत बूझै । १२४/५

जीव

तुलसी के मत से जीव ईश्वर का ही अंश है । सत् चित् और आनंदस्वरुप है । परंतु श्री राम की भाँति सर्वशक्तिमान सर्वज्ञ या सर्वव्यापी नहीं है । राम सर्वरुप, सर्ववासी, जीव की गति-अगति के संचालक, स्वतंत्र, ईश और मायापति है, जीव एक देहवासी राम के अधीन, परतंत्र, ग्रंथ-बद्ध एवं मायावश है ।[1]

वह कर्ता और भोक्ता है । राम से अलग होने पर अर्थात् संसार प्रवाह में पड़कर वह माया के कारण अपने सहज स्वरुप को भूल जाता है और अनात्म शरीर को आत्मस्वरुप मान बैठता है । भौतिक सुख की आशा में अनेक दुःखों को सहन करता है ।[2]

---

१ विनयपत्रिका - ५४/३, ५५/७, ११२/३, १३६/१-३, १४५/५, १७७/३-४

२ जिव जबतें हरिते बिलगान्यो । तबतें देह गेह निजजान्यो ।
माया बस स्वरुप बिसरायो । तेहि भ्रम तें दारुन दुःख पायो ।
आनंद सिंधु मध्य तव बासा । बिनु जाने करु मरसि पियासा ।
मृग भ्रम बारि सत्य जिय जानी । तहँ तूमगन भयो सुजमानी ॥
तैं निज करम डोरि दृढ़ कीन्हों । अपने करनि गौंठि गाहि दीन्हीं ।
तेहि ते बरबस परयो अभागे । ता फलगरभवास दुख आगे ॥

जीव का स्वभाव है विषयों में आसक्त हो जाना । मायावश होकर जीव विविध विषयों में आसक्त हो जाता है और विविध प्रवृत्तियाँ करता है, इसका विशद् वर्णन 'विनयपत्रिका' के आत्मनिवेदनात्मक पदो में मिलता है ।[1]

मोक्ष–साधन

मायावश जीव के दु:खी होने के दो कारण है (१) अज्ञान (२) अभक्ति । इसलिये ज्ञान और भक्ति को मुक्ति के दो उपाय माने गये हैं । विवेक से ज्ञान का उदय होता है और ज्ञान से दु:ख की मुक्ति ।[2] विवेक और भक्ति के लिये भी प्रभुकृपा अनिवार्य मानी गई है ।[3]

---

१ विनयपत्रिका ८८–९२, १२२–२४, २४५

२ 'बिनु बिबेक' संसार घोर निधि पार न पावै कोई । १५५/५

तुलसिदास भवरोग रामपदप्रेम होन नहिं जाई । ८१/५

'छुटे न बिपति भजे बिनु रघुपति श्रृति संदेहु निबेरो । ८७/४

३ तुलसीदास हरिगुरु करुना बिनु बिमल बिबेक न होई । ११५/५

बिनुसतसंग भगति नहिं होई । ते तब मिलैं द्रवै जब सोई ॥ १३६/१०

शास्त्र में भवनाश के अनेक साधन बताये गये हैं, यज्ञ, वैराग्य, त्याग, ज्ञान आदि । परंतु ये सभी भी कभी कभी असफल हो जाते हैं ।[1]

भवबंधन से मुक्त होने का रामबाण उपाय एक ही है और वह है रामभक्ति और रामकृपा ।[2]

शास्त्र भवबंधन से मुक्ति के लिए तीन साधन बताये हैं – ज्ञान, कर्म और भक्ति । जिसे हम द्वितीय अध्याय में देख चुके हैं । परंतु तुलसी के मत से अज्ञानयुक्त कर्म मुक्ति की अपेक्षा बंधन को करनेवाला होता है ।[3]

---

१ 'जोग जाग जप बिराग तप सुतीरथ अहत ।
बाँधिबै को भवगचंद रेनु की रज बहत ॥ १२१/३
'जोगमख बिबेक बिरति बेदबिदित करम ।
करिबै कह कटू कठोर सूनत मधुर नरम ॥ १३१/२
करम धरम श्रमफल रघुबर बिनु,
राख को सो होम है ऊसर कैसो बरिसो । २६४/३

२ ज्ञान भगति साधन अनेक सब सत्य झूठ कछु नाहीं ।
तुलसिदास हरिकृपा मिटै भ्रम यह भरोस मन माहीं ॥ ११६/५

३ जनम अनेक किये नाना बिधि करम कीच चीत सान्यो
होई न बिमल बिबेकनीर बिनु बेद पुरान बखान्यो ।
करमकीच जिय जानि सानि चित चाहतकुटिल मलहिमल धायो । २४५/३
करतहुं सुकृत न पाप सिराहीं, रक्तबीज जिमि बाढ़त जाहीं ॥ १२८/३

कवितावली में दर्शन

'कवितावली' में तुलसी का लक्ष्य दार्शनिक सिद्धांतो का निरुपण करना नहीं है, परंतु वे स्वभावतः दार्शनिक कवि होने के कारण 'कवितावली' में छुट-पुट स्थानों पर स्वाभाविक रुप से दर्शन की झलक मिलती है ।

निर्गुण की अपेक्षा सगुण अधिक रुचिकर ।

तुलसीने निर्गुण की अपेक्षा सगुण की उपासना पर ज्यादा ज़ोर दिया है और कुछ उदाहरण देकर अपनी बात को सिद्ध करने का भी प्रयत्न किया है ।[1]

सर्वशक्तिमान राम

तुलसी सगुण और निर्गुण दोनों रुप का स्वीकार और प्रतिपादन करने के बाद वे राम विश्व को रचनेवाले, पालक एवं संहारक, सभी शक्तियों के मूल स्रोत, करुणानिधान, पापनाशक और भक्तसुखदायक है ऐसा दृढ़ता से मानते हैं ।[2]

---

१ अंतरजामिहु ते बड़े बाहेरजामि हैं रामुजे नाम लिये तो...
पैज परे प्रहलादहु को पगटे प्रभु पाहन तैं न हिये तें ॥ ७/१२९
'प्रीति प्रतीति बढी तुलसी तब तें सब पाहून पूजन लागे ।७/१२८

२ जो करता भरता हरता सुरसाहेब साहेब दीन दुनी को । ७/१४६
ईसन के ईस महाराजन के महाराज
देवन के देव देव प्रानहू के प्रान हौं ।
कालहू के काल महाभूतन के महाभूत ।
कर्महू के करम निदान के निदान हो ।
निगम को अगम सुगम तुलसी हू से को ।
एते मान सीलसिंधु करुनानिधान हौ । ७/१२६

ब्रह्म का अवतार क्यों ?

ब्रह्म राम धर्मस्थापना लोकमंगल और भूमिका भार नष्ट करने के लिए अवतार लेते हैं ।[1]

जगत्

राम के सिवा (अर्थात् ब्रह्मज्ञान के बिना) जो दृश्यमान जगत् है वह मिथ्या है ।[2]

जीव

अज्ञान और भक्ति के अभाव के कारण विषयासक्त जीव अनेक दुःखों को सहन करता है ।[3]

दुःख निवृत्ति के साधन

जीव को मुक्त होने के लिये ज्ञान, कर्म, भक्ति वैराग्य आदि साधन बताये है और भक्ति को सर्वश्रेष्ठ माना है ।[4]

---

१ धरम के सेतु जगमंगल के हेतु भूमिभार हरिबेको
अवतार लिये नरको । ७/१२२

२ झूठो है झूठो है सदा जुग संत कहत जे अंत लहा हौ...
जानकी जीवन जान न जान्यो तौ जान कहावत जान्या कहो है । ७/३९

३ जनम्यो जेहिं जोनि, अनेक क्रिया
सुख लागि करीं, न परैं बरनी । ७/३२

४ जो भजै भगवानु समान सोई ।
'तुलसी' हठ चातकु ज्यों गहि कै ।
नतु और सबै बिषबीज बए,
हर हाटक कामदुहा नहि कै । ७/३३
जो तजि देह को गेट को नेहु सनेहसो राम को होई सबेरो । ७/३५

गीतावली में दर्शन

गीतावली लिखने में तुलसी का हेतु दार्शनिक विचारधारा को प्रकट करने का नहीं है, तथापि न्यूनाधिक रुप से कुछ स्थानों पर 'दर्शन' के विषय में कुछ संकेत मिल जाते हैं ।

ब्रह्मराम का सगुण रूप

ब्रह्मा और महादेव भी जिनका आदर करते हैं वैसे परब्रह्म सुखसिंधु प्रभु स्वयं ही अवध में प्रकट हुए हैं ।[1]

ब्रह्म-जीव और माया

तुलसी के मत से राम, सीता, लक्ष्मण, ब्रह्म, माया और जीव का स्वरुप है ।[2]

---

१ जो सुखसिंधु सुकृत सीकर तें सिव बिरंचि प्रभुताई ।
सोई सुख अवध उमँगि रह्यो दस दिसि कौन जतन कहौं गाई ॥ ३/१/११
अति उदार अवतार मनुजबपु धरे ब्रह्म अज अबिनासी ।७/३८/१
दसरथगृह सोइ उदार भंजन संसारभार
लीला अवतार तुलसिदास त्रासहारी । १/२५/६

२ रुप सोभा प्रेम के से कमनीय काय है ।
मुनिबेष किये कैंधो ब्रह्म जीव माय है । २/२८/३

तुलसी मिथ्या जगत् के बंधन को छोड़कर मोक्ष साधना में लगने की बात कितनी सहज रुप से करते हैं ![१] तुलसी के मत से यह क्षणभंगुर जीवन का कोई मूल्य नहीं है[२] । यह देह पता नहीं कब धोखा दे देगा ।[३] इसलिये वे भेदबुद्धि को छोड़कर विवेक के साथ दुःख सुखातीत प्रभु का भजन करने को कहते हैं ।[४] जो भगवान परमप्रकाशमय और भक्त के लिये करोड़ों मातापिता के समान तथा भीतर के षड्रिपुओं के लिये करोड़ों अग्नि के समान है ।[५]

---

१ गांठि बिनु गुनकी कठिन जड़चेतन की ।
छोडी अनायास साधु सोधक अपानको । १/८८/३

२ तुलसी प्रभु झूठे जीवन लगि समय न धोखो लैहौं । ३/१३/४

३ तुलसीदास प्रभु मोहजनित भ्रम भेदबुद्धि
कब बिसरावहिंगे । ५/१०/५

४ तुलसीदास दुःखसुखातीत हरि सोच करन
मानहू प्राकृत जन... ५/१७/४

५ सील सहज हिमभानु तेज सतकोटि भानू हू के भानू हैं ।
भगति को हित कोहि मातुपितु अरिन्ह को कोहि कृसुत है ॥ ५/३५/३

अध्याय ४

रामचरित मानस में भक्ति

भक्त हृदय तुलसी / मानस में पग पग पर भक्ति का महिमागान / अविद्या से छूटने का एकमात्र उपाय भक्ति / प्रेमाभक्ति / हरिभक्ति का विश्वास / भक्ति से माया से मुक्ति / परम सुख का मार्ग भक्ति / भक्ति-परमार्थ का स्वरुप / भक्ति का स्वरुप / सब साधनों का एकमात्र फल भक्ति / भक्ति के आते मुक्ति का भी त्याग / रामभक्ति विज्ञान से भी दुर्लभ / भक्त-प्रभु का परमप्रिय पात्र / ज्ञान और भक्ति में भक्ति श्रेष्ठ / ज्ञान दीपक और भक्ति मणि / भक्ति के बिना मोक्ष असंभव / रामभक्ति भवसिंधु की नैया समान / भक्ति-क्लेश नाशक और सुखदायक / कलियुग में एकमात्र साधन भक्ति / मनुष्य देह की सार्थकता केवल भक्ति में / माया से मुक्ति का एकमात्र साधन रामकृपा / रामकृपा से दुर्लभ बातें भी सहज सुलभ / दुर्गुणों का शमन भी रामकृपा से / रामकृपा की प्राप्ति कैसे ? / प्रेम पूर्वक रामभक्ति भक्त के रक्षक श्रीराम / गर्वगंजन श्रीराम / शरणागत रक्षक श्रीराम / न मे भक्त प्रणश्यति / भक्ति के साधन / रामकथा का प्रभाव / रामभक्ति की चौदह भूमिकाएँ / भक्ति के प्रादुर्भाव के लिए कार्यमूलक ज्ञानमूलक और भक्तिमूलक मार्ग / शिव-राम की समन्वय भक्ति / भक्ति के अवलंबन सगुण राम / मुक्ति के प्रकार / भेद-भक्ति / नवधा भक्ति / श्रीराम की उदारता / मानस की भागवत् मतानुसार नवधा भक्ति / भक्ति रस / वत्सलभक्ति रस / शांतभक्ति रस / प्रेमा भक्तिरस / मानस की पारिवारिक भक्तिभावना - मातृ-पितृ भक्ति / पति भक्ति / भ्रातृभक्ति, स्वामी भक्ति अथवा राजभक्ति / मानस में पशु पक्षी और जड़ की भक्ति ।